अगस्त, 2019

परिचर्चा पत्र

भारत में गवेषण एवं खनन: गहन खोज़ का समय

एस. विजय कुमार

दि इनर्जी एण्ड रिसोर्सिस संस्थान
स्थायीवत भविष्य के लिए अभिनव समाधान की खोज

© प्रतिलिप्याधिकार
इस प्रकाशन की सामग्री प्रतिलिपि अधिकृत हैं। इस परिचर्चा पत्र की सामग्री का गैर–व्यापारिक उद्देश्यों के लिए प्रयोग किया जा सकेगा बशर्ते कि इसके स्रोत का पर्याप्त वर्णन हो। पुनः प्रकाशन से संबंधित पूछताछ इस पते पर भेजी जाए : दि इनर्जी एण्ड रिसोसिस इंस्टीट्यूट (टेरी) दरबारी सेठ ब्लॉक, इंडिया हैबिटैट सेंटर, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003, भारत

लेखक

एस. विजय कुमार, प्रतिष्ठित फैलो, टेरी
e-mail : SVijay.kumar@teri.res.in

बाह्य विश्लेषक

श्री ए.के. भंडारी, अपर महानिदेशक, भारतीय भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण (सेवा निवृत्त)

हिंदी प्रारूप का पुनः अवलोकन : श्रीमती सरोज नायर

लेखक का परिचय

एस. विजय कुमार इससे पूर्व खान मंत्रालय में अपर सचिव (2008–10) तथा सचिव (2010–11) रहे हैं। टेरी में वे संसाधनों और ग्रामीण विकास से संबंधित मुद्दों पर कार्य करते हैं तथा नीतिगत समन्वय और एसडीजी (SDGs) से संबंधित महत्वपूर्ण पहलों का नेतृत्व करते हैं। वे संयुक्त राष्ट्र संघ पर्यावरण के अंतर्राष्ट्रीय संसाधन पैनल के सदस्य भी हैं।

प्रशस्ति सुझाव मंचः विजय कुमार एस. (2019) । भारत में गवेषण एवं खननः गहन खोज़ का समयः टेरी परिचर्चा पत्र (नई दिल्ली): (दि इनर्जी एण्ड रिसोर्सिस इंस्टीट्यूट (टेरी))

संपादन एवं साज–सज्जा

आभास मुखर्जी, सुदीप पंवार

प्रकाशक

दि इनर्जी एण्ड रिसोसिस इंस्टीट्यूट (टेरी)

अधिक जानकारी के लिए

एकीकृत नीतिगत विश्लेषण कार्यक्रम : टेरी, दरबारी सेठ ब्लॉक, इंडिया हैबिटेट कॉम्प्लैक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली– 110003, भारत
दूरभाष : +91 11 2468 2100 या 2468 2111 । फैक्स : +91 11 2468 2144 या 2468 2145
Email: pmc@teri.res.in | Web: www.teriin.org

विषय-सूची

भारत में गवेषण एवं खनन : गहन खोज़ का समय

संक्षिप्त विवरण	5
खण्ड 1: रूपरेखा	7
भू–वैज्ञानिक पृष्ठभूमि	7
वैश्विक संदर्भ में भारत की स्थिति	7
भारत में खनिज विकास की व्यापक कार्यनीति के भाग के रूप में गवेषण	10
भारत में खनिज नीति तथा कानूनों का विकास	10
गवेषण हेतु विधायी ढांचे में हाल में हुए परिवर्तन	11
राष्ट्रीय खनिज गवेषण नीति (एनएमईपी) 2016	11
राष्ट्रीय खनिज नीति 2019	11
खण्ड 2: मुद्दे	13
खनन एवं गवेषण में पारदर्शिता	13
नीलामियां अभी भी व्यक्तिपरक एवं गैर–पारदर्शी हो सकती हैं	14
खनिज नीलामी बाजार को अस्त–व्यस्त कर सकती है	14
प्रभावकारी विनियम	15
एनएमईटी निधि का कारगर उपयोग	15
''एक्सप्लोरिंग इन इंडिया'' से ''माइन इन इंडिया'' से ''मेक इन इंडिया''	16
अन्तर–परम्परागत साम्यता	17
खण्ड 3: निष्कर्ष तथा भावी मार्ग	19
संदर्भ	21
अनुबंध	22
परिशिष्ट	25

भारत में गवेषण एवं खनन : गहन खोज़ का समय

संक्षिप्त विवरण

भारत में खनिजों के लिए सर्वाधिक भू–वैज्ञानिक संभावनाएं हैं। ऊपरी सतह अथवा उससे कुछ नीचे स्थित अधिकांश खनिज खोजे जा चुके हैं और गहराई में छिपे हुए खनिज निक्षेपों के लिए एक गहन खोज की आवश्यकता है। इसका अभिप्राय है नवीनतम प्रौद्योगिकियों के द्वारा सतत आधार पर गवेषण किया जाए। तथापि, अंतर्राष्ट्रीय ख्याति–प्राप्त फ्रेजर वार्षिक सर्वेक्षण 2016 के अनुसार, भारत को नीतिगत संभावना सूचकांक में 88, उच्च परम्परा खनिज संभाव्यता सूचकांक में 94 तथा निवेश आकर्षकता सूचकांक वाले 104 स्थानों में से 97वां स्थान दिया गया है। इस प्रकार, भारत नीचे के दस देशों में हैं।

खान और खनिज (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1957 (एमएमडीआर अधिनियम) ऐसे समय पर अधिनियमित किया गया जब सार्वजनिक क्षेत्र को अर्थव्यवस्था का उच्च स्तर प्राप्त है। एक सुधारात्मक राष्ट्रीय खनिज नीति की घोषणा 2008 में की गई थी जिसमें कहा गया कि गवेषण एवं खनन को रियायतों की पूर्ण पारदर्शिता के साथ स्वतंत्र कार्यकलापों के रूप में मान्यता दी जाएगी और यह भी कि निजी क्षेत्र टोही सर्वेक्षण (reconnaissance) एवं गवेषण में निवेश प्रमुख स्रोत होना चाहिए।

2015 में खान और खनिज (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1957 (एमएमडीआर अधिनियम) में आवंटन प्रक्रिया में विवेकाधिकार समाप्त करने और अधिक पारदर्शिता लाने के उद्देश्य से संशोधन किया गया था। नीलामी पद्धति को रियायतें प्रदान करने का एकमात्र तरीका बनाया गया। 2016 में सरकार द्वारा एक राष्ट्रीय खनिज गवेषण नीति (एनएमईपी) और उसके बाद, राष्ट्रीय खनिज नीति 2019 गई जिसमें कहा गया है गवेषण करने के लिए निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और यह भी कि नीलामी के समय प्रथम अस्वीकृति के अधिकार के माध्यम से नीलामी तंत्र के दायरे के अंतर्गत निजी क्षेत्रीय निवेश के साथ–साथ अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी को आकर्षित करने के लिए गवेषण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

इस परिचर्चा पत्र में सुझाव दिया गया है कि नीलामियों को रियायतों की मूल पद्धति बनाकर निजी क्षेत्र को नए गवेषण में अपेक्षित निवेश करने से निरूत्साहित किया गया है जबकि विदोहन के लिए खनिज निक्षेपों को लगातार उपलब्ध कराने हेतु ऐसा निवेश आवश्यक हैं।

इस पत्र में उल्लेख किया गया है कि ऐसा प्रतीत होता है कि गवेषण और खनन के बीच संबंध को न्यायालयों द्वारा अच्छी तरह समझ लिया गया है। उच्चतम न्यायालय ने भारत के राष्ट्रपति द्वारा प्रस्तुत संदर्भ में, दिनांक 27 सितंबर, 2012 की अपनी राय (भारत के संविधान के अनुच्छेद 143 (1) के अधीन 2012 के विशेष संदर्भ संख्या 1) में उल्लेख किया है कि प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन करते समय जन विश्वास के निर्वहन के लिए नीलामी ही केवल एक मात्र मार्ग नहीं है।

इस परिचर्चा पत्र में एमएमडीआर अधिनियम के संशोधन और खनिज नीति के संशोधन में शामिल दृष्टिकोण से उत्पन्न कुछ मुद्दों पर भी प्रकाश डाला गया है :

1. नीलामियां भी वस्तुनिष्ठ एवं गैर–पारदर्शी हो सकती हैं क्योंकि खनिजों के मूल्यांकन की वर्तमान प्रणाली को नीलामी के उद्देश्य के लिए नहीं बनाया गया है। यदि अनिश्चितता, अपूर्णता और मनमानी को कम किया जाना है तो 'यूएनएफसी' प्रणाली की बजाय खनिज संसाधनों को सूचित करने की अधिक सशक्त प्रणाली जैसे 'जेओआरसी' को अपनाने की आवश्यकता है।
2. इस संशोधित एमएमडीआर अधिनियम में ''कैप्टिव'' तथा ''नॉन–कैप्टिव'' खनन की अवधारणा आरंभ की गई है । बाजार को विभाजित करके तथा संसाधन की कमी की धारणा उत्पन्न करके ''कैप्टिव'' खानों की नीलामी से धातु निर्माताओं द्वारा अनावश्यक उच्च नीलामी बोलियां आरंभ होंगी (धातु बनाने वाली परिसंपत्तियों को कच्चे माल की कमी के भय से), जिसमें बाजारी उतार–चढ़ाव के रहते, एक ''विनर कर्स'' की काफी संभावना होती है। इस अधिनियम में संशोधन से एक गैर–समानता प्रक्रिया की भी उत्पत्ति हुई है क्योंकि सार्वजनिक उपक्रमों को नीलामी के बिना खानें आवंटित की जाती हैं।
3. यह प्रणाली बाजार की कार्य कुशलता को प्रोत्साहित नहीं करती है। नीलामी प्रणाली केवल पूरी तरह पहले खोजे गए निक्षेपों के लिए होने चाहिए और 'कैप्टिव' और 'नॉन–कैप्टिव' खानों के बीच बिना कोई अंतर के अपनाई जानी चाहिए ताकि अयस्क विकसित करने के लिए मुक्त बाजार हो और संसाधनों का उपयोग पूर्ति और मांग की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अत्यधिक कुशलता पूर्वक किया जा सके। स्वाभाविक रूप में नीलामी लौह अयस्क, बॉक्साइट और चूना–पत्थर जैसे खनिजों के लिए, जिनकी उपलब्धि व्यापक क्षेत्रफल पर होती है और जिनका पूर्वेक्षण (Prospecting) आसानी से किया जाता है। ऐसी जिन खानों की नीलामी की जाती है उन्हें प्रत्येक 20 अथवा 30 वर्षों के बाद जब तक उस निक्षेप का आर्थिक रूप से खनन–योग्य हिस्सा खाली नहीं हो जाता, पुनः विस्तार (extension) के माध्यम से खनन करने की अनुमति दी जानी चाहिए। इससे, उसके कार्यकाल का स्थायित्व सुनिश्चित होगा तथा रियायतधारी को दीर्घावधि निवेश और खान योजना बनाने में समर्थ बनाएगा तथा वह अलग–अलग श्रेणियों के अयस्क का बेहतर उपयोग कर सकेगा। साथ ही, खनिज रियायतों को मुक्त रूप से हस्तांतरित किए जाने का प्रावधान होना चाहिए जिससे निष्कर्षण एवं प्रोसेसिंग की प्रौद्योगिकी सुधारों का लाभ उठाया जा सके।
4. जैसे–जैसे ''मेक इन इंडिया'' नीति से प्रेरित होकर देश का विकास होता है तथा उद्योग और विनिर्माण में वृद्धि होती है खनिज संसाधनों की सुनिश्चित उपलब्धता सामान्य रूप में भारतीय उद्योग को और विशेष

रूप से, विनिर्माण को एक प्रतियोगी लाभ देने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी। अब इस बात पर बल दिए जाने की आवश्यकता है कि अनुसंधान तथा विकास (R & D) प्रक्रिया के माध्यम से आधार धातु अयस्कों से उप–उत्पाद धातुओं द्वारा सह–उत्पादन पर बल दिया जाए ताकि तथाकथित प्रौद्योगिकी धातुओं तथा ऊर्जा–महत्व की धातुओं की आवश्यकताओं को कारगर रूप से पूरा किया जाए और एक ओर, कच्ची सामग्री की उपलब्धि की सुरक्षा और दूसरी ओर, देश के विनिर्माण क्षेत्र को एक प्रतियोगी लाभ प्रदान किया जा सके। गवेषण से भारत की खनिज सुरक्षा और प्रतियोगी ताकत में सुधार होना चाहिए और गवेषण को नीलामी से प्राप्त राजस्व पर निर्भर नहीं रहना चाहिए।

5. नीलामियों में धातु निर्माण उद्योग की वित्तीय व्यवहार्यता को कम करने तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतियोगिता शक्ति घटाने की क्षमता है। यदि ''मेक इन इंडिया'' का लक्ष्य प्राप्त किया जाना है तो रॉयल्टियों, आयातों तथा लागतों को अंतर्राष्ट्रीय प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किए जाने की आवश्यकता है।
6. खनन क्षेत्र में सामान्य रूप से विनियमों में अभाव के जटिल और व्यापक स्वरूप को देखते हुए, अब समय आ गया है कि इस क्षेत्र के सुदृढ़ एवं तकनीकी रूप से विश्वसनीय प्रबंधन हेतु स्वतंत्र खनन विनियामक प्राधिकरणों की स्थापना की जाए।

खण्ड 1 : रूपरेखा

भू-वैज्ञानिक पृष्ठभूमि

भारत की भू–संरचना प्राचीन समय की है जिसे 'आर्कियन' काल कहा जाता है जो लगभग 2,500 मिलियन वर्षों से पहले की है। भारतीय शील्ड[1] में आर्कियन संरचनाओं में भारत का अधिकांश दक्षिणी और पूर्वी भाग तथा असम, झारखण्ड, मध्य प्रदेश और राजस्थान के कुछ भाग आते हैं। इसके बाद, प्रोटेरोजोइक काल था जो 2,500 से 570 मिलियन वर्ष पहले तक का है। अरावली क्षेत्र प्राचीन प्रोटेरोजोइक पर्वत का अवशेष है। विन्ध्य क्षेत्र भी इस काल से जुड़े हुए हैं। इसके बाद, 570 से 245 मिलियन वर्ष पूर्व तक भारत में पुरापाषाण काल था जब बड़े कोयला निक्षेपों का निर्धारण किया गया था। भारतीय क्रेटन एक समय में पेंजिया के सुपर कौन्टीनेन्ट का भाग था जिसकी रचना लगभग 335 मिलियन वर्ष पूर्व में विद्यमान भू–आकार (क्रेटन) में से हुई थी। सुपर कौन्टीनेंटों की रचना और उनका विघटन पृथ्वी

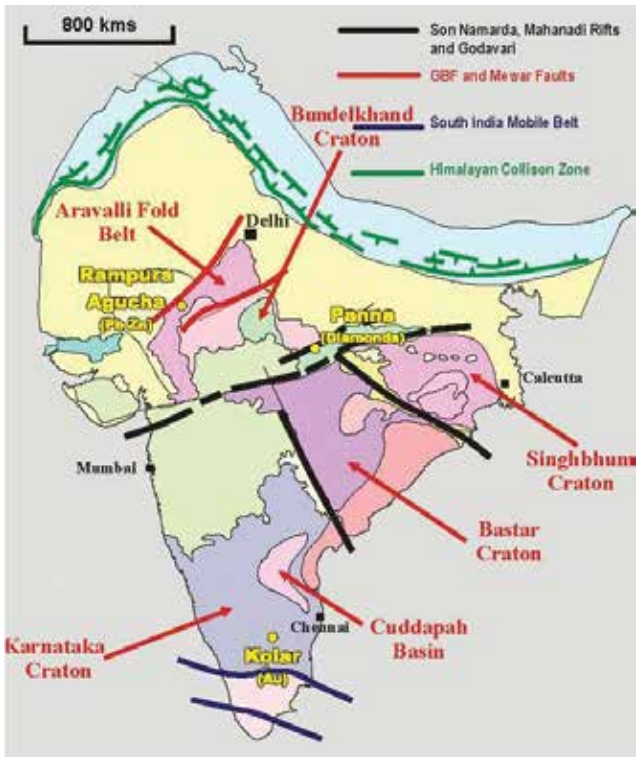

के एक चक्रीय काल का इतिहास प्रतीत होता है। रिफ्टिंग के कारण पेंजिया टूट कर गोंडवाना (दक्षिण की ओर) और लौरासिया (उत्तर की ओर) नामक दो सुपर कंटीनेंट अलग–अलग हो गए। भारतीय क्रेटन तब तक गोंडवाना से जुड़ा रहा जब तक लगभग 125 मिलियन वर्ष पूर्व सुपरकंटीनेंट अलग होना शुरू हुआ। गोंडवाना के इस विखण्डन ने मडगास्कर–अंटार्टिका–भारत भूभाग को अफ्रीका–दक्षिण अमरीका भूभाग से अलग कर दिया। आस्ट्रेलिया लगभग 100 मिलियन वर्ष पूर्व तक भारत और अंटार्टिका से जुड़ा रहा जब भारत अलग हो गया और उत्तर की ओर बढ़ने लगा। भारतीय प्लेट उत्तर की तरफ बढ़ती रही और लगभग 50 मिलियन वर्ष पूर्व यूरेशिया प्लेट से टकरा गई। आस्ट्रेलिया तथा अंटार्टिका लगभग 45 मिलियन वर्ष पूर्व पूरी तरह अलग हो गए।

पश्चिम आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका के कुछ भागों का एक लंबी अवधि तक भारत के भागों के साथ एक समान भू–संरचनात्मक इतिहास है और इनमें खनिज क्षेत्रों में कुछ समानता की संभावना हो सकती है। पश्चिम आस्ट्रेलिया तथा दक्षिण अफ्रीका की प्रमाणित खनिज संभाव्यता को देखते हुए तथा भारत की ज्ञात संरचनाओं के साथ उनकी खनिज प्राप्ति स्थलों के बीच पर्याप्त संबंध से यह आमतौर पर स्वीकार किया जाता है कि भारत के कुछ भागों में अनेक प्रकार के खनिज निक्षेप प्रकट होने की संभावना है जिनमें से अधिकांश की अभी खोज की जानी है।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारत

जैसा कि स्पष्ट है कि भारत में अनेक खनिजों की उच्च भू–वैज्ञानिक संभावनाएं हैं। अधिकांश खनिजों का सतह पर या सतह के निकट नीचे पिछले 50 और अधिक वर्षों में पता लगाया गया है तथा सतह के नीचे छिपे हुए खनिज निक्षेपों के बारे में गहन खोज की आवश्यकता है। इसका अभिप्राय नवीनतम प्रौद्योगिकियों के माध्यम से एक सतत आधार पर खनिज गवेषण किया जाना है। उन्नत खनन देशों में ऐतिहासिक साक्ष्यों से विदित है कि व्यापक रूप से खपत होने वाले खनिजों जैसे लौह अयस्क, चूना पत्थर को गवेषण करके खनन के माध्यम से खपत किए गए संसाधनों के स्टाक की प्रतिपूर्ति की जाती है जिसका एक उदाहरण आस्ट्रेलिया है जिसके लौह अयस्क के भंडारों में अधिक गवेषण तथा सज्जीकरण की एक प्रक्रिया के माध्यम से 40 वर्षों में 100 गुणा वृद्धि हो गई है, जैसा कि होडा समिति की रिपोर्ट 2006 में दर्शाया गया है।

खान मंत्रालय के 2011 में प्रकाशित कार्यनीति पत्र ''अनलॉकिंग दि पोटेंशियल ऑफ इंडियन मिनरल्स सेक्टर'' में वैश्विक खनन क्षेत्र में भारत की सापेक्ष निम्न स्थिति का उल्लेख किया गया है। इस पत्र में कटु शब्दों में उल्लेख किया गया है :

[1] इस परिचर्चा पत्र में प्रयुक्त प्रमुख तकनीकी शब्दों की शब्दावली परिशिष्ट में दिया गया है।

''जैसा कि पूरी दुनिया में खनन क्षेत्र में वृद्धि हो रही है, भारतीय खनन क्षेत्र पिछड़ रहा है क्योंकि पिछले दशक में जी.डी.पी. में उसका योगदान केवल 1.2 प्रतिशत रहा (प्रमुख खनन अर्थव्यवस्थाओं में 5 से 6 प्रतिशत की तुलना में) तथा प्रति कि.मी. गवेषण खर्च बहुत ही कम है (9 अमरीकी डालर (400 रु.) जबकि आस्ट्रेलिया का 124 अमरीकी डालर (5,500 रु.) तथा कनाडा का 118 अमरीकी डालर (5,310 रु0)) है।

''भारत ने खनन क्षेत्र में बदलाव लाने के लिए प्रगतिशील अनेक नीतिगत उपाय आरंभ किए हैं। भारत खनन क्षेत्र की संभावनाओं का विदोहन करके लगभग 210 बिलियन अमरीकी डालर से 250 मिलियन अमरीकी डालर (रु. 945 से 1,125 हजार करोड़) अथवा जीडीपी में 6 से 7 प्रतिशत की वृद्धि कर सकता है और 2025 तक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष योगदान के द्वारा 13 से 15 मिलियन रोजगार पैदा कर सकता है।

इस उपलब्धि के लिए, छः मुख्य प्राथमिकताओं पर कार्य किए जाने की आवश्यकता है, जिनमें गवेषण एवं अंतर्राष्ट्रीय अधिग्रहण के माध्यम से संसाधन तथा रिजर्व आधार में वृद्धि करना; परमिट संबंधी विलम्ब में कमी करना; मूल सहायक व्यवस्थाएं स्थापित करना (अवसंरचना, जनशक्ति, प्रौद्योगिकी); खनन स्थल के आसपास सतत खनन एवं सतत विकास सुनिश्चित करना; सूचना, शिक्षा और संचार की रणनीति तैयार करना तथा अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाना'' शामिल हैं ।''

बिना दोहन वाले विशाल संसाधनों को देखते हुए अवसंरचना, पूंजीगत माल तथा प्राथमिक उद्योगों में आंतरिक उपयोग हेतु स्वदेश में उपलब्ध खनिजों के विकास की दिशा में, पहला कदम सर्वेक्षण और गवेषण है। दुनिया में विशाल खनन आधार अथवा संसाधनों से समृद्ध राष्ट्रों ने गवेषण के लिए पर्याप्त धन (सरकारी अथवा निजी) के प्रावधान किए हैं किंतु भारत का गवेषण बजट अभी भी सीमित है। यह भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि यद्यपि गवेषण में अनेक देशों में, विशेष रूप से, एक सुधार प्रक्रिया के बाद गवेषण निवेश में वृद्धि हो रही है, तथापि, भारतीय उप–महाद्वीप में ऐसी कोई प्रवृत्ति नहीं दिखाई देती है। वर्ष 2016 में एस एंड पी ग्लोबल मार्किट इंटेलिजेंस द्वारा ग्लोबल कंपनीज के कारपोरेट एक्सप्लोरेशन स्ट्रेटैजीज (सीईएस) के एक अध्ययन से पता चलता है कि 2016 में सबसे अधिक अलौह खनिज गवेषण बजट वाली 20 कंपनियों का लगभग 7 बिलियन अमरीकी डालर के गवेषण बजट का 31 प्रतिशत बैठता है। इस रिपोर्ट में यह भी दर्शाया गया है कि टॉप 10 कंपनियों का बजट प्रत्येक 5 डालर में 1 डालर बैठता है जो वैश्विक रूप से गवेषण पर खर्च किया जा रहा था। तांबा, सोना तथा हीरा के लिए टॉप 10 कंपनियों के कुल गवेषण बजट का 88 प्रतिशत बैठता है।

अंतर्राष्ट्रीय गवेषण बजट खनन स्थलों की आकर्षकता के आधार पर आवंटित किए जाते हैं। 2016 के फ्रेजर इंस्टीट्यूट एनुअल सर्वे आफ माइनिंग कंपनीज के अनुसार एशिया दुनिया में सबसे कम आकर्षक नीतिगत वातावरण वाला क्षेत्र है। फ्रेजर एनुअल सर्वे दुनिया भर में देशों का सर्वेक्षण उनकी निवेश आकर्षकता एवं नीतिगत वातावरण का विश्लेषण करने के लिए किया जाता है। इस सर्वे में खनिज प्रशासन, नियमों का प्रवर्तन, पर्यावरण नियमों, कानूनी और कराधान व्यवस्था, भूमि, अवसंरचना, सामाजिक–आर्थिक मुद्दों, राजनीतिक तथा सुरक्षा समस्याओं, व्यापार मुद्दों आदि जैसे विभिन्न नीतिगत विषयों का आकलन किया जाता है। भारत को नीतिगत संभावना सूचकांक में 88, उच्च परम्परा संभाव्यता सूचकांक में 94 तथा निवेश आकर्षकता सूचकांक वाले 104 स्थानों में से 97वां स्थान दिया गया है जो एक मिला–जुला सूचकांक है जिसमें नीतिगत संभावना सूचकांक और उत्तम पद्धति खनिज संभाव्यता सूचकांक[2] दोनों के परिणामों को मिलाया जाता है।

निम्नलिखित तालिका में एस एंड पी ग्लोब मार्किट इंटेलिजेंस डाटा के अनुसार पूरे विश्व में गवेषण वर्तमान तुलनात्मक गवेषण आवंटनों की समीक्षा दर्शाई गई है। पहली तालिका में खनिजों के लिए देशों की क्षमता और साथ ही निवेश आमंत्रित करने के लिए देशों के खनिज कानूनों की आकर्षकता दोनों दर्शाई गई है। यद्यपि कनाडा और आस्ट्रेलिया लंबे समय से गवेषण के क्षेत्र में अग्रणी बने हुए हैं तथापि, गवेषण के बाजारों के रूप में लैटिन अमरीकी देशों का उभरना सन् 2000 के बाद के सुधारों से सीधा संबंध है क्योंकि उन्होंने गवेषण को बढ़ाने के लिए रियायतों के अनुदान को आसान बनाकर और अपने खनिज कानूनों में स्थायित्व और पूर्वानुमानता के द्वारा जिससे निवेश पर उच्च लाभ मिल रहे हैं।

---

[2] 2016 के लिए निवेश आकर्षकता सूचकांक पर आधारित निवेश वाला दुनिया में प्रथम क्षेत्र सस्काटचेवन (कनाडा) है और मनीतोबा (कनाडा) पिछले वर्ष में 19वें रैंक के बाद इस वर्ष दूसरे स्थान पर आ गया है। पश्चिमी आस्ट्रेलिया तीसरे स्थान पर था और अन्य नेवादा (यू.एस.ए.) फिनलैंड, क्यूबेक (कनाडा), एरिजोना (यू.एस.ए.) स्वीडन, आयरलैंड गणराज्य और क्वीन्सलैंड (आस्ट्रेलिया) थे। जुजुए अर्जेंटाईन प्रांत का निवेश के लिए दुनिया में सबसे कम आकर्षक क्षेत्र का स्थान दिया गया था। साथ ही, सबसे नीचे 10 क्षेत्रों में 4 दूसरे अर्जेंटाइनन प्रांत और साथ ही वेनेजुएला, अफगानिस्तान, भारत, जिम्बाबवे और मोजाम्बिक आते हैं।

भारत में, गवेषण पर अधिकांश वर्तमान व्यय कोयले, लौह अयस्क और सतही धातुओं पर हो रहा है। इसके विपरीत, वैश्विक गवेषण व्यय का सबसे बड़ा अनुपात स्वर्ण आधार धातुएं (जैसे तांबा, सीसा और जस्ता) और हीरे पर होती हैं जैसा दूसरी तालिका में दिया गया है। उच्च व्यय इसलिए होता है क्योंकि इन खनिजों का पता लगाने में कठिनाई होती है और ये खनिज प्रायः जमीन की सतह के नीचे मिलते हैं। परिशिष्ट–2 में ऐसे खनिज निक्षेपों की संरचना की प्रक्रिया के कुछ तकनीकी ब्यौरे दिए गए हैं।

भारत की भू–वैज्ञानिक बनावट को देखते हुए यहां सभी तीन प्रकार के खनिजों (स्वर्ण, आधार धातु तथा हीरा) की अत्यधिक संभावनाएं हैं और इसलिए, वैश्विक गवेषण निवेश का निम्न अनुपात जो भारत में आ रहा है, इसके बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि यह निम्न भू–वैज्ञानिक संभाव्यता के कारण है अथवा निम्न खनिज गवेषण के कारण है।

वैश्विक गवेषण बजट 2017 में देश का भाग

देश	वैश्विक गवेषण बजट में प्रतिशत भाग	देश	वैश्विक गवेषण बजट में प्रतिशत भाग
कनाडा	14%	वेस्ट अफ्रीका	5%
आस्ट्रेलिया	13%	ईस्ट अफ्रीका	2%
यूनाईटेड स्टेट्स (अमरीका)	7%	डीआर कांगो	2%
मैक्सिको	6%	साऊथ अफ्रीका	4%
पेरू	6%	रूस	5%
चिली	6%	चीन	6%
लैटिन अमरीका (अन्य)	6%	पैसिफिक/साऊथ ईस्ट एशिया	5%
ब्राज़िल	4%	पूर्व सोवियत संघ	1%
यूरोप	5%	अन्य (भारत सहित)	3%

स्रोत : वैश्विक खनन गवेषण प्रवृतियां 2017, एस एंड पी मार्किट इंटेलिजेंस डाटा

सामग्री–वार व्यय गवेषण व्यय

(यू.एस. डालर बिलियन में)

वर्ष	स्वर्ण	आधार धातुएं (तांबा, निकिल, सीसा/जस्ता)	हीरा	पीजीएम (प्लेटिनम समूह की धातुएं)	अन्य खनिज	कुल
2012	9.65 (47%)	6.57 (32%)	0.62 (3%)	0.31 (1.5%)	3.39 (16.5%)	20.53 (100%)
2013	6.64 (46%)	4.76 (33%)	0.58 (4%)	0.14 (1%)	2.31 (16%)	14.43 (100%)
2014	4.62 (43%)	3.76 (35%)	0.54 (5%)	0.21 (2%)	1.61 (15%)	10.74 (100%)
2015	4.14 (45%)	3.13 (34%)	0.46 (5%)	0.14 (1.5%)	1.33 (14.5%)	9.20 (100%)
2016	3.48 (50%)	2.16 (31%)	0.28 (4%)	0.070 (1%)	0.98 (14%)	6.97 (100%)
2017	4.05 (51%)	2.38 (30%)	0.25 (3%)	0.080 (1%)	1.19 (15%)	7.95 (100%)

स्रोत : एसएंडपी ग्लोबल मार्किट इंटेलिजेंस (2012–17 के लिए)

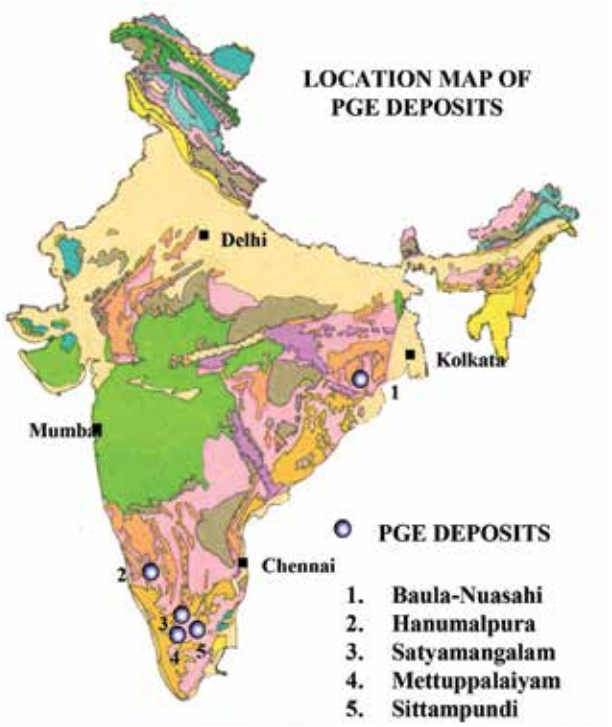

भारत में खनिज विकास की व्यापक कार्यनीति के भाग के रूप में गवेषण

गवेषण वास्तव में खनिज विकास की प्रेरक शक्ति है। गवेषण वह धोड़ा है जो खनन के रथ को खींचता है। यद्यपि प्राचीन काल में खनिज अधिकांशतः आकस्मिक रूप में पाए जाते थे, आधुनिक खनन अधिकांशतः भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र और भू–वैज्ञानिक साधनों का उपयोग करके अनेक वैज्ञानिक टीमों द्वारा वैज्ञानिक गवेषण के परिणाम हैं।

भारत में खनिज नीति तथा कानूनों का विकास

खान और खनिज (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1957 (एमएमडीआर अधिनियम) ऐसे समय में लागू हुआ था जब सार्वजनिक क्षेत्र अर्थव्यवस्था के शीर्ष स्तर पर था। राष्ट्रीय खनिज नीति 1993 खनिज क्षेत्र की पहली नीति थी जो आर्थिक उदारीकरण के तत्काल पश्चात् लाई गई थी। इसमें गवेषण और खनन में निजी निवेश को आकर्षित करने तथा संबंधित कानूनी परिवर्तन की अपेक्षा की गई थी जिसके परिणामस्वरूप एमएमडीआर अधिनियम में व्यापक रूप से संशोधन किए गए। किंतु सामान्य रूप से निवेश और विशेष रूप से, एफडीआई आशाओं से कम रही और परिणामस्वरूप खनिज क्षेत्र में सुधार लाने के उद्देश्य से एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया गया (जिसे होडा समिति के नाम से भी जाना जाता है)। होडा समिति की सिफारिशों के फलस्वरूप, राष्ट्रीय खनिज नीति 2008 बनाई गई। होडा समिति की सिफारिशों पर आधारित खनिज नीति 2008 का प्रमुख बल इन बातों पर था :

- निजी क्षेत्र टोही सर्वेक्षण और गवेषण में निवेश का प्रमुख स्रोत होना चाहिए। अधिक गवेषणकर्त्ताओं को आकर्षित करने के लिए टोही सर्वेक्षण गैर–समावेशी होना चाहिए।
- गवेषण एवं खनन को रियायतों की पूरी मान्यता देकर स्वतंत्र कार्यकलाप माना जाएगा।

1. रियायत अनुदान प्रणाली को टोही परमिट (आर.पी.) से पूर्वेक्षण लाइसेंस (पी.एल.) से खनन पट्टे (एमएल) में अवधि की सुरक्षा के साथ एक समयबद्ध पद्धति में पहले आओ पहले पाओ (first-in-time) के आधार पर अंतरित करने के प्रयोजन के लिए बाधा रहित बनाया जाना चाहिए।

- गहराई में स्थित निक्षेपों (आधार धातु आदि) की खोज के लिए उच्च प्रौद्योगिकी के लिए विशेष रूप से प्रोत्साहित करने हेतु व्यापक क्षेत्र पूर्वेक्षण लाइसेंस (एल.ए.पी.एल.) नामक एक नई व्यवस्था आरंभ की जानी चाहिए जिसमें रियायतधारी रियायत की समाप्ति के समय, क्रमिक रूप से रियायत अवधि में उस क्षेत्र को छोड़ने के लिए इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार शेष आच्छादित क्षेत्र पर एक एम.एल. प्राप्त कर सके।
- होडा समिति ने यह भी सिफारिश की कि ''थोक प्रकार'' (Bulk nature) के खनिजों जैसे लौह अयस्क, चूना–पत्थर, बॉक्साइट आदि के लिए जो सतह के नजदीक अपेक्षाकृत व्यापक क्षेत्र पर फैले होते हैं, यदि वह निक्षेप पूरी तरह पूर्वोक्षित हो (आमतौर पर सरकारी खर्च से अथवा जहां पट्टाधारी गवेषण करने के बाद छोड़ देता है अथवा पट्टा रद्द किया जाता है) उस निक्षेप की नीलामी की जा सकती है। अन्य मामलों में, 'सबसे पहले' प्रणाली के आधार पर निजी क्षेत्र आर.पी. (पी.एल. आदि के लिए, जैसा भी मामला हो, आवेदन कर सकेगा)।

- इसके आधार पर, उपर्युक्त विशेषताओं और साथ ही निम्नलिखित प्रावधानों के लिए संसद में एक नया एमएमडीआर विधेयक 2011 प्रस्तुत किया गया :–
- पूर्ण अंतरणीयता के साथ बाधा रहित अंतरण
- गहराई में स्थित खनिजों के लिए व्यापक क्षेत्र पूर्वेक्षण हेतु नई रियायत
- पूर्ण पूर्वेक्षित निक्षेपों की नीलामी
- राष्ट्रीय, राज्य तथा जिला खनिज निधियां आरंभ करना
- राष्ट्रीय और राज्य स्तरीय खनन विनियामक प्राधिकरण एवं ट्रिब्यूनल आदि की स्थापना

2. तथापि, यह विधेयक मई 2014 में लोकसभा का विखण्डन होने पर कालबधित (lapsed) हो गया ।

गवेषण हेतु विधायी ढांचे में हाल में हुए परिवर्तन

2015 में, इस आशय के साथ खान और खनिज (विकास और विनियमन अधिनियम, 1957 (एमएमडीआर अधिनियम) को संशोधित किया गया (और उसके अधीन बने नियमों को अधिसूचित किया गया) कि आवंटन प्रक्रिया में विवेकाधिकार समाप्त किया जाए और अधिक पारदर्शिता लाई जाए। खनिज रियायतों के अनुदान के संबंध में निम्नलिखित प्रमुख परिवर्तन किए गए :

- कैप्टिव प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त विद्यमान खान के पट्टे 2030 अथवा पट्टा वैधता के अंत तक अथवा मूल पट्टे के आरंभ से 50 वर्ष तक, जो भी बाद में हो, तथा खान को उस अवधि के अंत में, नीलामी के लिए रखा जाएगा। गैर–कैप्टिव खानों की समाप्ति की तारीख 2020 है न कि 2030 (उन खानों की संख्या का विवरण–जिनके 2020 में समाप्त होने की संभावना है अनुबंध–1 में उपलब्ध है)।
- नई खनिज रियायतें पूर्वेक्षण चरण के लिए अथवा खनन चरण के लिए केवल बोली के द्वारा (सर्वेक्षण तथा गवेषणा के आंकड़ों के आधार पर) (क्रमशः अधिनियम 10 बी (2) तथा 11 (2)) अनुदत्त की जाएंगी। खनन (नीलामी) नियम 2015 को एमएमडीआर अधिनियम के अधीन अधिसूचित किया गया है जिसमें नीलामी कार्यविधि को स्पष्ट किया गया है।
- 'पहले आओ पहले पाओ' आधार पर टोही सर्वेक्षण परमिट अनुदान करने की पूर्व कार्यविधि के स्थान पर गैर–विशिष्ट टोही सर्वेक्षण परमिट प्रणाली (एनईआरपी) आरंभ की गई है (धारा 10–सी एमएमडीआर अधिनियम) किंतु इसमें आगे जाकर खनिजीकरण के साक्ष्य के आधार पर पूर्वेक्षण अथवा खनन रियायत प्राप्त करने का अधिकार नहीं है। इस अधिनियम के अधीन जारी खनिज (एनईआरपी) नियम 2015 में यह कार्यविधि दर्शाई गई है। धारा 10–सी जिसमें परमिट के अनुदान का प्रावधान है, उसमें भी यह उल्लेख किया गया है कि किसी एनईआरपी धारक को उसके टोही सर्वेक्षण के आधार पर किसी पूर्वेक्षण लाइसेंस अथवा खनन पट्टे के लिए दावा करने का अधिकार नहीं होगा। इसका आशय यह है कि एनईआरपी में प्राप्त आंकड़ों को सरकारी एजेंसियों द्वारा आगे गवेषण करने हेतु प्रयोग में लाया जाएगा ताकि खनिजिकरण का पता लगने पर उसकी नीलामी की जा सके। एनईआरपी नियम 2015 के नियम 4 (1) में उल्लेख किया गया है कि एनईआरपी धारक अपने आंकड़ें प्रस्तुत कर सकता है तथा सरकार से कह सकता है कि वह प्राप्त खनिज की नीलामी की मांग कर सकता है।
- धारा 8 ए (2) अब यह अधिदेश देती है कि खनन पट्टा एक 50 वर्षीय गैर–नवीकरणीय पट्टा होगा और पट्टा अवधि समाप्त होने पर, यदि वहां खनन योग्य भंडार हों तो, खान की पुनः नीलामी की जाएगी।
- खनिज नीलामी नियम, 2015 के अधीन पात्रता शर्तों में किसी प्रथम चरण बोलीदाता (भारत में निगमित कंपनी) के पास अनुमानित संसाधनों के मूल्य का (खनन पट्टा स्तर बोली के मामले में) 4 प्रतिशत (पूर्वेक्षण स्तर बोली के मामले में 1 प्रतिशत) के बराबर निवल राशि होनी अपेक्षित है।

3. एमएमडीआर अधिनियम, 2015 में किए गए संशोधनों में अधिनियम की धारा 9सी के अधीन राष्ट्रीय खनिज गवेषण न्यास (एनएमईटी) की स्थापना का प्रावधान है। इस ट्रस्ट में रॉयल्टी पर 2% उपकर द्वारा धन जमा किया जाता है।

राष्ट्रीय खनिज गवेषण नीति (एनएमईपी) 2016

सरकार 2016 में एक राष्ट्रीय खनिज गवेषण नीति (एनएमईपी) लाई है ताकि गवेषण प्रयासों में और अधिक तेजी लाई जा सके । इस नीति का उद्देश्य है :

- निजी एजेंसियों को हस्तांतरणीय अधिकारों के साथ पूरी पट्टा अवधि के दौरान राज्य सरकारों को मिलने वाले राजस्व के रूप में कुछ हिस्सेदारी के अधिकार के साथ (रॉयल्टी/प्रीमियम के एक निश्चित प्रतिशत के माध्यम से) अभिज्ञात ब्लॉकों/क्षेत्रों में गवेषण कार्य करने की अनुमति देना। नीति में कहा गया है कि यह प्रतिशतता/राशि सफल बोलीदाता द्वारा संबंधित गवेषण एजेंसियों को अदा की जाएगी और इसका निर्धारण उस समय किया जाएगा जब खनिज ब्लॉक सफल गवेषण के आधार पर ई–नीलामी के लिए रखे जाएंगे ;
- इन गवेषण एजेंसियों को तब ई–नीलामी में भाग लेने की अनुमति दी जाएगी जब गवेषण के आधार पर प्राप्त उनके खनिज ब्लॉकों को नीलामी के लिए रखा जाएगा; तथा
- विभिन्न प्रकार के खनिजों के लिए गवेषण की मानक लागत निकाली जाएगी ताकि गवेषण एजेंसियों को उनके संबंधित क्षेत्रों में किसी खनन–योग्य भंडार न मिलने की दशा में क्षतिपूर्ति की जाएगी।

राष्ट्रीय खनिज नीति 2019

सरकार ने हाल ही में राष्ट्रीय खनिज नीति, 2019 जारी की है। इसकी निम्नलिखित विशेषताएं इसे 2008 की नीति से अलग करती हैं :

- खनिज उत्पादन को केंद्रीय सरकार की ''मेक इन इंडिया'' पहल में उपयोग किया जाना चाहिए।
- राज्यों को खनिज ब्लॉकों की नीलामी पर्यावरण एवं वन स्वीकृतियां लेने के पश्चात् करनी चाहिए।
- पैरा शीर्षक ''सर्वेक्षण एवं गवेषण'' के स्थान पर ''पूर्वेक्षण एवं गवेषण'' शब्द रखा गया है।

- निजी क्षेत्र को गवेषण में निवेश का प्रमुख स्रोत बनाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि नीति में केवल यह कहा गया है कि गवेषण करने के लिए निजी क्षेत्र को ''प्रोत्साहित किया जाना चाहिए''।
- गवेषण को नीलामी के समय प्रथम अस्वीकृति के अधिकार के माध्यम से नीलामी पद्धति के दायरे के अंतर्गत निजी निवेश और साथ ही अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी आकर्षित करने के लिए प्रोत्साहित करने का प्रावधान है।
- नीति में राजस्व शेयरिंग आधार अथवा अंतर्राष्ट्रीय पद्धति के अनुसार किसी समुचित प्रोत्साहन के द्वारा अनछुए क्षेत्रों में टोही सर्वेक्षण परमिट से पूर्वेक्षण लाइसेंस से खनन पट्टे अथवा कंपोजिट टोही सर्वेक्षण परमिट एवं पूर्वेक्षण लाइसेंस एवं खनन पट्टे की नीलामी से बाधा–रहित अंतरण की बात भी कही गई है ।
- नीति में यह कहते हुए ''अंतर–परम्परागत साम्यता'' की अवधारणा परिकल्पित की गई है :
- ''प्रत्येक खनिज के संबंध में अंतर–परम्परागत साम्यता आकलन भंडारों/संसाधनों जैसे पहलुओं पर अलग–अलग दृष्टिकोण से विचार करके किया जाएगा.....'' (नीति का पैरा 10)

खण्ड 2 : मुद्दे

खनन एवं गवेषण में पारदर्शिता

एमएमडीआर अधिनियम में 2015 में किए गए संशोधन मुख्यतः इस इच्छा से प्रेरित थे कि रियायतों के आवंटन में अनावश्यक विवेकाधिकार तथा मनमानी को कम किया जाए जो भ्रष्टाचार का एक संभावित स्रोत है और निजी पार्टियों के पक्ष में सार्वजनिक संसाधन को अंतरित करते समय राजस्व अर्जित किया जा सके। 2015 के संशोधन में मुख्य बल स्वतंत्र और पारदर्शी मूल्य प्राप्ति हेतु खनिज निक्षेपों की नीलामी करने पर था। ऐसा करके, कानून ने गवेषण एवं खनन के बीच के परम्परागत संपर्क समाप्त कर दिया जो निजी क्षेत्र निवेश को प्रोत्साहित तथा नियंत्रित करता है और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बेहतर पद्धति है। चूंकि गवेषण एक उच्च जोखिम वाला उद्यम है, जहां रॉयल्टी का भुगतान करके खनन पट्टे के अनुदान की उच्च पुरस्कार प्रणाली के माध्यम से गवेषण व्यय की प्रतिपूर्ति की जा रही थी। अनुदान की सामान्य प्रक्रिया "प्राथमिकता के "मानदंड पर आधारित थी (चूंकि अधिकांश मामलों में खनिजों के लिए गवेषण अज्ञात संभावना वाला क्षेत्र होता था)। खान की नीलामी करके कानून ने निजी क्षेत्र के लिए नए गवेषण में भारी निवेश करने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं रखा है।

भारतीय खान ब्यूरो ने अपनी इंडियन मिनरल्स ईयर बुक 2018 में (भाग 1 : सामान्य समीक्षा) "टोही सर्वेक्षण परमिटों, पूर्वेक्षण लाइसेंसों और खनन पट्टों की स्थिति" में 2015–18 की अवधि के दौरान गवेषण एवं पूर्वेक्षण के लिए निम्नलिखित का उल्लेख किया है :

2015–16 से 2017–18 में अनुदत्त पूर्वेक्षण लाइसेंस

राज्य	2015–16		2016–17*		2017–18**	
	सं.	क्षेत्र (हेक्ट.)	सं.	क्षेत्र (हेक्ट.)	सं.	क्षेत्र (हेक्ट.)
भारत	5	2869.04	.	-	-	-
आंध्र प्रदेश	1	900.00	.	-	-	-
छत्तीसगढ़	1	1548.00	.	-	-	-
उड़ीसा	3	421.04	.	-	-	-

* स्रोत : खनन पट्टे एवं पूर्वेक्षण लाइसेंस, 2017 का बुलेटिन

* स्रोत : विभिन्न राज्य सरकारों से प्राप्त आंकड़े (बीएमआई अप्रैल–सितंबर, 2017 और बीएमआई अक्तूबर 2017–मार्च 2018 के संकलित आंकड़े)

टोही सर्वेक्षण परमिट/कम्पोज़िट (पी.एल. एवं एम.एल.) लाइसेंस[4]

आर.पी./एन.ई.आर.पी.			पी.एल. एवं एम.एल.		
2015–16	2016–17	2017–18	2015–16	2016–17	2017–18
2015–16 के दौरान टोही सर्वेक्षण परमिटों/गैर विशिष्ट टोही सर्वेक्षण परमिटों के अनुमोदित/अनुदत्त किए जाने की कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है।	2016–17 के दौरान टोही सर्वेक्षण परमिटों/गैर विशिष्ट टोही सर्वेक्षण परमिटों के अनुमोदित/अनुदत्त किए जाने की कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है।	अप्रैल 2017 से मार्च 2018 की अवधि के दौरान टोही सर्वेक्षण परमिटों/गैर विशिष्ट टोही सर्वेक्षण परमिटों के अनुमोदित/अनुदत्त किए जाने की कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है।	2015–16 के दौरान "पूर्वेक्षण लाइसेंस–एवं–खनन पट्टे" अथवा कम्पोजिट लाइसेंसों के अनुमोदित/अनुदत्त किए जाने की कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है।	2016–17 के दौरान "पूर्वेक्षण लाइसेंस–एवं–खनन पट्टे" अथवा कम्पोजिट लाइसेंसों के अनुमोदित/अनुदत्त किए जाने की कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है।	अप्रैल 2017 से मार्च 2018 की अवधि के दौरान "पूर्वेक्षण लाइसेंस–एवं–खनन पट्टे" अथवा कम्पोजिट लाइसेंसों के अनुमोदित/अनुदत्त किए जाने की कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है।

[3] प्राथमिकता (एफआईटी) को पहले आओ पहले पाओ (एफसीएफएस) भी कहा जाता है। विभिन्न खनिज समृद्ध देशों में अनुदान प्रक्रिया अनुबंध–3 में दी गई है।

[4] इंडियन मिनरल्स ईयर बुक 2016, 2017 तथा 2018 के पृष्ठ 3–2 तथा 3–3 से संकलित।

यह दिलचस्प बात है कि गवेषण और खनन के बीच संबंध को न्यायालयों द्वारा अच्छी प्रकार समझा गया है। सर्वोच्च न्यायालय ने भारत के राष्ट्रपति द्वारा प्रस्तुत एक संदर्भ में दिनांक 27 सितंबर 2012 को (भारत के संविधान के अनुच्छेद 143 (1) के अधीन 2012 के विशेष संदर्भ सं. 1 में) अपनी राय में उल्लेख किया है कि प्राकृतिक संसाधनों का निष्कर्षण करने हेतु लोक विश्वास के निर्वहन का नीलामी ही एक–मात्र मार्ग नहीं है। जैसाकि न्यायालय ने उल्लेख किया है:

> *"इसलिए, निष्कर्ष के रूप में यह कथन कि अनुच्छेद 14 का अधिदेश वाणिज्यिक उपयोग के लिए किसी प्राकृतिक संसाधन का राजस्व बढ़ाने के लिए निष्कर्षण अवश्य किया जाए, और इसलिए, नीलामी के माध्यम से किया जाए यह न तो कानून की दृष्टि पर और न औचित्य की दृष्टि पर आधारित है .....कानूनी औचित्य के अलावा, अनिवार्य नीलामी आर्थिक औचित्य के विपरीत भी होगी। अलग–अलग संसाधनों के लिए अलग–अलग प्रक्रियाओं की आवश्यकता होती है। आमतौर पर, प्राकृतिक संसाधनों की खोज में भारी पूंजी की आवश्यकता के कारण गवेषण और विदोहन की संविदाओं को एक साथ वितरित किया जाता है। इस प्रकार के गवेषण आरंभ करने में जोखिम होगा और भारी लागत लगेगी। यदि यह आश्वासन न हो कि प्राप्त संसाधनों का उपयोग निश्चित है और उस संसाधन के लिए उसे खुली नीलामी में भाग लेना होगा; एक विवेकपूर्ण व्यापारी गवेषण कार्यकलापों में ऊंची लागत खर्च नहीं करना चाहेगा।"*

उच्चतम न्यायालय द्वारा जैसा कि पूर्वानुमान लगाया गया है, जैसा कि ऊपर के उद्धरण से स्पष्ट है, नीलामी करने से गवेषण निवेश की संभावना पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। यद्यपि, यह तर्क दिया जा सकता है कि नीलामियों से स्वतंत्र तथा पारदर्शी मूल्य प्राप्ति में सहायता मिलेगी, सच यह है कि जब तक गवेषण संबंधी आंकड़ों की प्रकाशन प्रक्रिया पारदर्शी एवं विश्वसनीय नहीं बनती है, नीलामी के प्रयोजन वाला मूल्यांकन हमेशा व्यक्तिपरक तथा त्रुटि–पूर्ण वाला ही होगा।

नीलामियां अभी भी व्यक्तिपरक एवं गैर–पारदर्शी हो सकती हैं

एमएमडीआर अधिनियम के अधीन (2015 संशोधन के माध्यम से) खनिज संसाधनों की नीलामी की वर्तमान प्रणाली खनन पट्टों के लिए जी 2–लेवल आंकड़ों तथा कंपोजिट लाइसेंस के लिए जी–3 लेवल पर आधारित है (जो यूएनएफसी वर्गीकरण के अनुसार क्रमशः (332) तथा (333) है)। उसमें अनुमानों की अनिश्चितता की अनेक समस्याएं हैं। एनएमईपी के पैराग्राफ 15.1 में किए गए उल्लेख के अनुसार उद्देश्य यह है कि जी 3 अथवा जी 2 लेवल तक गवेषण करने हेतु एनएमईटी के माध्यम से राज्य सरकारों द्वारा धन देकर नीलामी–योग्य निक्षेपों की एक सतत प्रणाली तैयार की जाए। वास्तव में, 332 और 333–स्तर गवेषण आर्थिक रूप से खनन–योग्य अथवा संभावित आर्थिक रूप से खनन–योग्य भंडार की मात्रा का निर्धारण करना काफी नहीं है और सभी उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर विशेषज्ञों की राय को नीलामी के प्रयोजनों के वास्ते मूल्यांकन करने के लिए अपनाने की आवश्यकता है, जिसमें अनुमान एवं पूर्वानुमान शामिल है। ऐसी परिस्थितियों में एक व्यवहार्यता रिपोर्ट अति आवश्यक है और समान व्यवहार के हित में, खनन पट्टों की नीलामी में लागू किए गए मानक एमएमडीआर अधिनियम में गैर–नीलामी (परम्परागत मामलों) के अधीन पूर्वेक्षण से खनन में अंतरण की अपेक्षा के प्रावधानों से कम नहीं होने चाहिए।

अतः खनिज संसाधनों की रिपोर्टिंग की वर्तमान यू.एन.एफ.सी. प्रणाली की बजाए अधिक कारगर प्रणाली अपनाए जाने की आवश्यकता है। संयुक्त अयस्क भंडार समिति (जे.ओ.आर.सी.) कोड जैसी प्रणालियां हैं जिनके लिए गवेषण परिणामों के नियमित आवधिक रिपोर्टिंग की आवश्यकता होती है तथा व्यवहार्यता पर आधारित मूल्यांकन के अनुमानों के लिए विश्वसनीय तृतीय पक्षों से रिपोर्ट लेनी होती है।

खनिज नीलामी बाजार को अस्त–व्यस्त कर सकती है

संशोधित एमएमडीआर अधिनियम में "कैप्टिव" तथा "गैर–कैप्टिव" खनन की विभाजनयुक्त अवधारणा आरंभ की गई है। यह कोयला क्षेत्र की एक परंपरा है, जो कोयला खानों के राष्ट्रीयकरण के कारण अभी भी प्रचलित है। अनेक राज्य धातु निर्माता कंपनियों की सहायता करने के लिए कैप्टिव प्रयोजनों हेतु खानों की नीलामी को प्राथमिकता दे सकते हैं किंतु हाल में अपनाए गए इस विभाजन से बाजार शक्तियों पर आधारित मांग–पूर्ति की कार्य प्रणाली में दखल आएगा और उससे संसाधनों का कम–अनुकूलतम उपयोग होगा क्योंकि तथाकथित "कैप्टिव" खानों को आमतौर पर निम्न ग्रेड अयस्कों (जो उनकी अपनी धातु निर्माण इकाईयों में उपयोग योग्य नहीं हैं) उन्हें बाजार में मूल्य–वर्द्धित मध्यवर्ती उत्पादों को बेचने से प्रतिबंधित किया जाता है।

4. किंतु सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बाजार का इस विभाजन और संसाधन की कमी की एक अवधारणा पैदा करके "कैप्टिव" खानों की नीलामी से धातु निर्माताओं द्वारा अनुचित रूप से ऊंची नीलामी बोलियां लगाई जाएंगी (फंसी हुई परिसंपत्तियों के भय से) जिसमें यह भी पूरी संभावना है कि अस्थिरता के रहते हुए बाजार में "विजेता को नुकसान" (Winners curse) हो।

किसी विशिष्ट धातु उत्पादक के साथ खान को सीधे जोड़ने की आवश्यकता मनगढ़ंत प्रतीत होती है क्योंकि सामान्यतः अधिकांश खनिजों का उपयोग केवल धातुओं के निर्माण में किया जा सकता है (अथवा मुख्य घटक के लिए)। यदि इसकी मंशा यह सुनिश्चित करना है कि खनिजों का उपयोग सीधे निर्यात की बजाए विनिर्माण तथा अवसंरचना के लिए धातुओं का उत्पादन करके राष्ट्रीय विकास के लिए किया जाए तो 'कैप्टिव खनन' की अवधारणा के बजाए निर्यातों पर स्पष्ट प्रतिबंध लगाना बेहतर विकल्प होगा। कैप्टिव खानें किसी धातु निर्माता को संसाधन सुरक्षा की भावना अवश्य देती हैं यदि कोई सामान्य कमी अथवा कोई आपूर्ति की अधिकता न हो और इस प्रयोजन के लिए धातु निर्माता इकाई ही केवल निवेश करने की क्षमता रखती हो, किंतु भारत इस स्थिति से ऊपर आ गया है।

इस अधिनियम में संशोधन एक असंतुलित स्थिति उत्पन्न करती है क्योंकि सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रमों (पी.एस.यू.) को बिना नीलामी के खानें आवंटित की जाती हैं। यद्यपि यह संशोधन राज्यों को यह अनुमति देता है कि वे रॉयल्टी के अलावा पी.एस.यू. से प्रीमियम भी प्राप्त करें, प्रक्रिया अस्पष्ट है। खनिज (सरकारी कंपनियों द्वारा खनन) नियम 2015 में प्रावधान है कि सरकारी कंपनी अथवा निगम अथवा किसी संयुक्त उद्यम को अनुदत्त किसी खनन पट्टे के लिए प्रत्येक मामले में केंद्रीय सरकार द्वारा रॉयल्टी की एक यथानिर्धारित प्रतिशतता के बराबर की अतिरिक्त राशि अदा की जाएगी। जब तक यह अतिरिक्त राशि निजी क्षेत्र द्वारा प्रदत्त नीलामी प्रीमियम की बेंचमार्क नहीं होती तब तक राज्य केंद्रीय पी.एस.यू. को खानों के आवंटन के प्रस्ताव आसानी से स्वीकार नहीं करेंगे क्योंकि इसका अभिप्राय राजस्व को छोड़ देना होगा।

प्रभावकारी विनियम

2015 में यथा संशोधित एमएमडीआर अधिनियम ने (खनिज रियायतों के अनुदान की एकमात्र पद्धति के रूप में नीलामी करके) भारतीय खान ब्यूरो (आई.बी.एम.) और राज्य खनन एवं भूविज्ञान निदेशालयों के कार्य स्तर तथा दायरे को बढ़ा दिया है। विशेष रूप से, खनिज स्रोत अनुमान की प्रमाणिकता तथा खनिज भंडार मूल्यांकन सुनिश्चित करने के संबंध में विश्वसनीय एवं बहु–विषयी विशेषज्ञता के विकास के लिए विशेषज्ञतापूर्ण कार्य हैं। तथापि, भारतीय खान ब्यूरो और राज्य निदेशालयों को जन–शक्ति, उपकरणों तथा कौशल द्वारा मजबूत बनाए जाने की आवश्यकता है ताकि वे अपने विनियामक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने में समर्थ बन सकें। उन्हें यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि गवेषण कार्य लाइसेंस की शर्तों और निबंधनों के अनुसार आरंभ किया जाए और वह खोज तथा विदोहन को बढ़ाने के व्यापक हित में हो। विनियामक प्रणाली को विधायी व्यवस्था के माध्यम से आवश्यक अधिकार प्रदान किए जाने की आवश्यकता होगी ताकि इस क्षेत्र को निवेश एवं प्रौद्योगिकी प्रवाह के लिए अधिक अनुकूल बनाया जा सके। इस प्रयोजन के लिए क्षमता निर्माण को, यदि नीलामी माध्यम अपनाने के पीछे की मंशा को हासिल किया जाना है तो एक उच्च प्राथमिकता देनी होगी।

एन.एम.ई.टी. निधि का प्रभावी उपयोग करना

- एन.एम.ई.टी. का खर्च रॉयल्टी पर 2 प्रतिशत के एक उपकर से किया जाता है। 30,000 करोड़ रु. की वार्षिक रॉयल्टी मानते हुए (कोयला रॉयल्टी सहित) ट्रस्ट को प्राप्त धन लगभग 600 करोड़ रु. प्रतिवर्ष (अथवा 100 मिलियन डालर प्रतिवर्ष) के आसपास होगा। यद्यपि यह इस क्षेत्र में 5 मिलियन अमरीकी डालर प्रतिवर्ष (अधिकांशतः कोयले पर) के वर्तमान व्यय की तुलना में बहुत अधिक है। फिर भी, यह स्पष्टतः कनाडा (1110 मिलियन अमरीकी डालर), आस्ट्रेलिया (1080 मिलियन अमरीकी डालर प्रतिवर्ष) तथा लैटिन अमरीका (800 मिलियन अमरीकी डालर प्रतिवर्ष)[5] जैसे देशों में गवेषण व्यय की तुलना में समुद्र में एक बूंद के बराबर है । यह प्रतीत होता है कि यह ट्रस्ट उस भारी व्यय का थोड़ा–सा भाग ही पूरा करेगा जो गवेषण की गति को आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक है और यह उच्च–जोखिम उच्च प्रतिफल की मिसाल की भावना को पर्याप्त रूप में प्राप्त नहीं कर पाएगा ।
- इस समय ट्रस्ट निधि जी.एस.आई. तथा एम.ई.सी.एल. सहित केंद्रीय पी.एस.यू. के विस्तृत गवेषण कार्यकलापों के लिए उपयोग की जा रही है। इसमें खतरा है कि ट्रस्ट की निधियों को, जी.एस.आई. भू–विज्ञान, भू–भौतिकी तथा भू–रसायन के बेसलाईन सर्वेक्षण के प्राथमिक कार्य से हटकर खनिजों के विस्तृत गवेषण के भ्रामक कार्य में लगा लें। इसमें यह विशिष्ट संभावना भी है कि जी.एस.आई. पुनर्गठन के पश्चात् जिस विशिष्ट जनशक्ति को नियुक्त कर रही है वह अपेक्षित विशेषज्ञता (और साथ ही अनुभव) के साथ व्यापक स्तर पर विस्तृत गवेषण के लिए, विशेष रूप से, बेस मेटल, नोबल मेटल तथा रत्नों के गहराई वाले निक्षेपों हेतु वैज्ञानिक कर्मियों को जुटाने में समर्थ न हो सके। वास्तव में पूरी गवेषण कार्यनीति पर यह सुनिश्चित करने की दृष्टि से आगे विश्लेषण किए जाने की आवश्यकता है कि एक ओर, जी.एस.आई. का बेसलाइन सर्वेक्षण और मानचित्रण का कार्य बाधित न हो और दूसरी ओर, गवेषण के लिए निधियों और विशेषज्ञ सेवाएं बाधित न हों। तथ्य यह है कि 2019 की नीति में ''सर्वेक्षण और गवेषण'' को ''पूर्वेक्षण और गवेषण'' में बदलाव यह संकेत देता है कि यह भय निराधार नहीं है।
- इस नीति का अभिप्राय यह है कि प्रारंभिक कार्य सार्वजनिक एजेंसियों (और उनकी निजी नामांकित इकाईयों) द्वारा किया जाएगा ताकि एकत्र किए गए आंकड़ें का उपयोग किसी खनिज निक्षेप की नीलामी के लिए किया जा सकेगा और इस प्रकार, राजस्व में अधिकतम बढ़ोतरी की जा सकेगी। राष्ट्रीय खनिज गवेषण नीति के पैरा 15.1 में कहा गया है कि ''नीलामी योग्य खनिज संभावनाओं की एक सतत प्रवाह विकसित करने में राज्य सरकारों को एक मुख्य भूमिका अदा करनी है।'' उन्हें जी.एस.आई. अथवा दूसरी एजेंसियों द्वारा तैयार की गई खनिज गवेषण रिपोर्टों को लेना होगा और उन पर गवेषण के जी 3 या जी 2 स्तर पूरा करना होगा। राज्यों को भी अपने स्टाफ की गवेषण क्षमताएं तैयार करने की आवश्यकता है। केंद्रीय सरकार को इस प्रक्रिया में शीघ्रता लाने के लिए प्रोत्साहित करना होगा। एन.एम.ई.टी. द्वारा राज्यों के क्षमता निर्माण कार्य को सहायता दी जाएगी।''

5. यह सुनिश्चित करना कि खनिजों की प्राप्ति जी 3 अथवा उससे भी अधिक उच्च स्तर जी 2 स्तर से की जाती है, इसके लिए पर्याप्त आधार स्तरीय कार्य और व्यय की आवश्यकता होती है। इसमें यदि तकनीकी अथवा वाणिज्यिक कारणों से भंडार वास्तव में विदोहनीय नहीं है तो व्यर्थ व्यय का भारी जोखिम होता है। इस समय, इन सार्वजनिक एजेंसियों की क्षमता भू–वैज्ञानिक तथा तकनीकी संसाधनों की दृष्टि से बहुत सीमित है। एक व्यापक स्तर पर निवेश (जिसमें पी.एस.यू. के मामले में वित्तीय ईक्विटी तथा दूसरे मामलों में बजटीय सहायता शामिल है) करना होगा ताकि छिपे हुए खनिज निक्षेपों का पता लगाने के लिए विस्तृत गवेषण तथा आधुनिक प्रौद्योगिकी के दक्षतापूर्ण उपयोग करने हेतु क्षमता निर्माण किया जा सके। छिपे हुए अथवा गहराई में स्थित खनिजों (Concealed, deep-sealed minerals) के लिए पर्याप्त बहु–आयामी विशेषज्ञता

[5] अनुलग्नक 2 देखें।

की भी आवश्यकता है जिसे लंबे समय में ही तैयार किया जा सकता है। परिशिष्ट–3 में कुछ संबंधित प्रक्रियाओं के विवरण दर्शाए गए हैं। परिशिष्ट–4 में देश में संभावित क्षेत्रों के संकेत दर्शाए गए हैं जिन्हें गवेषित किया जा सकता है (विभिन्न जोखिम स्तरों के साथ)।

- हालांकि यह नीति अभी आरंभिक चरण में है, यहां अनेक स्पष्ट मुद्दे हैं जिन पर गहन विचार किए जाने की आवश्यकता है :
- निजी नामांकित एजेंसियों द्वारा गवेषण कार्य वर्तमान वैधानिक रूपरेखा के अंतर्गत नहीं आता है जिसमें एन.ई.आर.पी. के प्रावधान है। इसका तात्पर्य यह है कि एजेंसियां खनिज (रियायत) नियम 1960 और खनिज (संरक्षण और विकास) नियम, 2017 (1988 के पूर्व नियम के स्थान पर) के अनुसार आई.बी.एम. के सीधे विनियामक नियंत्रण के अधीन नहीं होंगी, जैसाकि किसी रियायतधारी के मामले में होगा।
- यह प्रावधान है कि ऐसी नामांकित एजेंसियां भी नीलामी की बोली में भाग ले सकती हैं। अन्य निजी कंपनियों की तुलना में इनकी बोली में इनके गवेषण कार्य का अनुचित प्रभाव पड़ने की आशंका हो सकती है, और यह नहीं कहा जा सकता कि यह प्रक्रिया सब इकाईयों के संबंध में समान व्यवहार कर रही है। इस संभावना से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि वे लाभ प्राप्त करने के लिए सभी आंकड़े साझा न करें।
- जैसाकि पहले ही कहा जा चुका है, राष्ट्रीय खनिज गवेषण ट्रस्ट में सालाना आमदनी 600 करोड़ रु. (100 मिलियन डालर) के आसपास है, उसका मोटा हिस्सा जी.एस.आई., केंद्रीय खान योजना एवं डिजाइन संस्थान (सी.एम.पी.डी.आई.), एम.ई.सी.एल. तथा राज्य खनन और भू–विज्ञान निदेशालय के माध्यम से प्रोस्पेक्ट को जी 3 अथवा जी 2 तक लाने के लिए आरक्षित रखा जाएगा। राज्यों की क्षमता निर्माण को भी ट्रस्ट की निधियों में से किए जाने की आवश्यकता होगी जैसा एन.एम.ई.पी. के पैरा 15.1 में उल्लेख किया गया है। इसलिए, निधि में उपलब्ध राशि एन.एम.ई.पी. के अधीन गवेषण के लिए ट्रस्ट निधि से निजी गवेषण हेतु सीमित होने की संभावना है।
- यद्यपि एन.एम.ई.पी. के पैरा 11.2 में गवेषण के लिए राष्ट्रीय प्राथमिकताएं निश्चित करने के लिए आई.बी.एम. द्वारा एक कार्य तंत्र विकसित किए जाने की पैरवी की गई है, तथापि, निधियों की कमी और क्षमता संबंधी अड़चनों के कारण किसी प्राथमिकता प्रक्रिया के आधार पर ज्ञात गहराई में स्थित और छिपे–खनिज निक्षेपों अथवा सामरिक अथवा अन्य खनिजों के लिए एक बड़ा विस्तार देखना कठिन है। भारत के नियंत्रक तथा महालेखा परीक्षक (सी.ए.जी.) की सार्वजनिक निधि लेखा परीक्षा प्रक्रिया ''उच्च जोखिम–उच्च प्रतिफल'' स्थितियों में प्रयुक्त की जा रही एन.एम.ई.टी. निधि के बारे में उत्साहित होने की संभावना नहीं है और जो निधियां उपलब्ध हैं वे सतही खनिजों के स्थलों के लिए उपयोग किए जाने की ही संभावना है।
- पूरी दुनिया में गवेषण उस दिशा में बढ़ रहा है जिसमें अधिक स्वतंत्रता और लचीलेपन की अनुमति है। कनाडा में कुछ प्रांत आंशिक सब्सिडी देकर उच्च–जोखिम गवेषण को प्रोत्साहन दे रहे हैं। उदाहरण के लिए क्वीन्सलैंड, आस्ट्रेलिया में यह बात चल रही है कि आंकड़ों के उत्तरोत्तर संग्रह के आधार पर गवेषण एजेंसियों को अधिक संचालन में छूट दी जाए। इसके विपरीत, एन.एम.ई.पी. में उच्च संचालन और वित्तीय नियंत्रण प्रकट होता है जिससे विश्व स्तरीय गवेषण विशेषज्ञता आकर्षित होने की संभावना नहीं हैं।

''एक्सप्लोरिंग इन इंडिया'' से ''माइन इन इंडिया'' से ''मेक इन इंडिया''

जैसे–जैसे देश विकसित हो रहा है और उद्योग तथा विनिर्माण बढ़ रहा है ''मेक इन इंडिया'' नीति द्वारा प्रेरित होकर खनिज संसाधनों की सुनिश्चित उपलब्धता और समीपता सामान्यतया भारतीय उद्योग को और विशेष रूप से विनिर्माण को एक प्रतिस्पर्द्धात्मक शक्ति प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी। एन.एम.ई.पी. के पैरा 11.2 में यह विचार किया गया है कि आई.बी.एम. को गवेषण के लिए राष्ट्रीय प्राथमिकताएं निर्धारित करते समय भारत की दीर्घकालीन खनिज सुरक्षा के बारे में अनुमान तैयार करने की आवश्यकता है। विशेष रूप से, आर.एंड डी. प्रक्रिया के माध्यम से आधार धातु अयस्कों से उपोत्पाद के सह–उत्पादन पर बल दिए जाने की आवश्यकता है ताकि देश की तथाकथित प्रौद्योगिकी धातुओं और ऊर्जा महत्व की धातुओं की आवश्यकताएं कारगर रूप से पूरी की जा सकें और एक ओर, कच्चे माल की सुरक्षा और दूसरी ओर, दूसरे देश के विनिर्माण क्षेत्र के लिए प्रतिस्पर्द्धात्मक शक्ति प्रदान की जा सके। गवेषण को उद्देश्य केवल राजस्व बढ़ाना नहीं है अपितु भारत की खनिज सुरक्षा तथा प्रतिस्पर्द्धा शक्ति में भी सुधार लाना है।

भारत के विनिर्माण क्षेत्र के लिए ''क्रिटिकल नॉन–फ्यूल मिनरल रिसोर्सिस फार इंडियाज मैन्यूफैक्चरिंग सेक्टरः ए विज़न फार 2030'' नामक ऊर्जा, पर्यावरण एवं जल परिषद (सी.ई.ई.डब्ल्यू.) द्वारा किए गए एक अध्ययन में इस प्रकार कहा गया है :

> *''देश में संसाधन सुरक्षा हेतु कार्यनीतिपरक योजना के लिए राष्ट्रीय स्तर पर खनिज संसाधन आधार पर एक स्पष्ट सोच होना जरूरी है। संसाधन सुरक्षा हेतु कार्यनीतिपरक योजना है। इस समय, भारत के कुल भू–भाग के 10 प्रतिशत से कम में छिपी खनिज संपदा के लिए भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण किया गया है। यह निजी गवेषण एजेंसियों के लिए निवेश करने में बड़ी रूकावट है क्योंकि उन्हें जोखिम निवेश के औचित्य के लिए अच्छे बेस लाइन डाटा की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, हाल ही में संशोधित किए गए एम.एम.डी.आर. अधिनियम, 2015 में खनन पट्टों के अनुदान के लिए एक पारदर्शी व्यवस्था की पैरवी की गई है, लेकिन कुछ प्रावधान जैसे गैर–विशिष्ट टोही सर्वेक्षण परमिट निजी निवेश को रोकने का काम करता है। जब नियोजित जोखिम पूंजी अधिक होती है तो लाभ की आशा भी अधिक है और आर.पी. धारकों के लिए केवल रॉयल्टी का प्रावधान (आने वाले खनिकों से) लाभदायक नहीं दिखाई देता।*

''जैसा कि एन.एम.ई.पी. (2016) में स्वीकार किया गया है, गवेषण कार्यकलापों में प्राथमिकता तय करना सरकार के पास उपलब्ध संसाधनों की सीमित

मात्रा का बेहतर उपयोग के लिए अत्यावश्यक है। यह अध्ययन (अर्थात् सी.ई.ई.डब्ल्यू. अध्ययन) में एक उपयोगी डिसिजन–ट्री विश्लेषण का प्रस्ताव है जिसमें किसी विशिष्ट खनिज के महत्व के संकेत निहित हैं और फिर उसमें गवेषण प्रयासों का प्राथमिकता क्रम बताया गया है। यह एक निश्चित दृष्टिकोण नहीं है किंतु यह अन्य स्तरों पर कारगर री–साईक्लिंग अथवा तकनीकी प्रतिस्थापनों की खोज का भी पता लगाता है। इस अध्ययन में भारत में निम्न अथवा कोई भंडार नहीं वाले खनिजों का भी उल्लेख है जो केवल अन्य खनिज प्रोसेसिंग से संबद्ध अथवा उप–उत्पाद के रूप में उपलब्ध हैं। इन खनिजों में बिसमथ, कैडमियम, गैलियम, इंडियम, मोलिब्डेनम रेनियम, सेलेनियम तथा टिन और वे जिनके लिए राष्ट्रीय स्तर पर विशिष्ट ध्यान देने की आवश्यकता है।''

6. स्पष्ट रूप से ''मेक इन इंडिया'' एक ऐसी मिसाल है जहां खनिजों की मध्यम–अवधि आवश्यकताओं का और अधिक अनुसंधान के माध्यम से विकास प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए निर्धारण किया जाता है ताकि उन खनिजों और धातुओं का अधिकतम निष्कर्षण सुनिश्चित किया जा सके जिनको साध्यता पूर्व अध्ययनों में अभिज्ञात किया जाता है, जैसा उनके आर्थिक निष्कर्षण के लिए आर एंड डी–प्रक्रिया की आवश्यकता होती है। वर्तमान में, यह क्षेत्र निजी क्षेत्र गवेषण के लिए संगठित नहीं है तो अनुसंधान प्रक्रिया में तो बिलकुल नहीं हैं। पूरी दुनिया में खनिज–निक्षेप प्रक्रिया आर एंड डी अधिकांशतः बाजार पूंजी का उपयोग करके निजी क्षेत्र द्वारा वित्त–पोषित है। कनाडा, आस्ट्रेलिया तथा अनेक दूसरे खनिज क्षेत्रों में भू–भौतिकी पर आधारित संभावित क्षेत्रों, आरंभिक टोही सर्वेक्षण और पहचान का सबसे बड़ा जोखिम कथित ''जूनियर्स'' द्वारा आरंभ किया जाता है, जो अधिकांश मामलों में व्यावसायिक भू–वैज्ञानिकों और भू–भौतिकीविदों वाली छोटी कंपनियां होती हैं जिनका वित्त पोषण टी. एस.एक्स. वेंचर एक्सचेंज जैसे एक्सचेंजों से 'वेंचर' पूंजी द्वारा किया जाता है। ये जूनियर्स संभावित खनिजीकरण (Mineralization) के बारे में जो आंकड़े प्राप्त करते हैं उसे बड़ी गवेषण कंपनियों को बेचते हैं जो संभावित खोजों के मामले में खनन स्तर तक आगे गवेषण करती हैं। जूनियर जोखिम प्रबंधन की दृष्टि से गवेषण अनुकूल प्रणाली का महत्वपूर्ण घटक बनते हैं और भारी राशियां प्राप्त करते हैं जैसा नीचे दिया गया है :

वर्ष	सम्मिलित जूनियर कंपनियों की संख्या	व्यय की गई राशि (बिलियन अमरीकी डालर)	विगत वर्ष की तुलना में कमी/वृद्धि
2012	3500	20.53	-
2013	3500	14.43	(-) 29.71
2014	2700	10.74	(-) 25.57
2015	3500	9.20	(-)14.34
2016	1580	6.97	(-) 24.24
2017	1535	7.95	14.06

स्रोत : एस.एंड पी. ग्लोबल इंटेलीजेंस (2012–17 के लिए)

यद्यपि, राष्ट्रीय खनिज नीति 2008 में इस मॉडल की क्षमता को स्वीकार किया गया है तथापि, एम.एम.डी.आर. अधिनियम 2015 में शामिल की गई नीलामी प्रक्रिया इसे असंभव बना देती है।

दूसरा विशिष्ट पहलू यह है कि ''मेक इन इंडिया'' के लिए भारतीय उद्योग वैश्विक रूप से प्रतिस्पर्द्धा वाले होने चाहिए। नीलामी से न केवल गवेषण निरूत्साहजनक होता है अपितु यह धातु निर्माताओं के लाभ मार्जिन को भी प्रभावित करता है जिसमें प्रचालन हानियां अथवा कम प्रतिस्पर्द्धात्मकता की संभावना होती है जिसके फलस्वरूप आयात प्रतिबंध लगते हैं। यदि ''मेक इन इंडिया'' का उद्देश्य प्राप्त करना है तो रॉयल्टी (तथा नीलामी प्रीमियम), आयात तथा लागत को अंतर्राष्ट्रीय स्तर से बेंच मार्क किए जाने की आवश्यकता होगी।

अंतर–परम्परागत साम्य

एन.एम.पी. 2019 में कहा गया है कि यह समझने की आवश्यकता है कि ''खनिजों सहित प्राकृतिक संसाधन एक साझा विरासत हैं जहां जनता की ओर से राज्य यह सुनिश्चित करने के लिए ट्रस्टी है कि भावी जनता को इस विरासत का लाभ प्राप्त हो। राज्य सरकारें यह सुनिश्चित करने का प्रयास करेंगी कि निष्कर्षित खनिजों का पूरा मूल्य राज्य को प्राप्त हो। तथापि, प्रत्येक खनिज के बारे में भंडारों/संसाधनों तथा री–साईक्लिंग के माध्यम से पुनः उपयोग की संभावना जैसे पहलुओं पर विचार करके अंतर–परंपरागत साम्यता पर विचार के लिए अलग–अलग दृष्टिकोण अपनाएं जाएंगे, जो भारतीय संदर्भ में संगत तथा उचित है।''

यह राष्ट्रीय खनिज नीति, 2008 से स्पष्ट भिन्न है जिसमें कहा गया है कि ''खनिजों का संरक्षण सुदूर भविष्य में उपयोग के लिए खपत एवं परिरक्षण दुराग्रही प्रतिबंध की भावना नहीं है अपितु इसे एक सकारात्मक के रूप में माना जाए जिससे खनन पद्धतियों, सज्जीकरण (Beneficiation) तथा निम्न ग्रेड अयस्कों का उपयोग और अस्वीकृति तथा संबद्ध खनिजों की प्राप्ति में सुधार के द्वारा भंडार आधार में वृद्धि की जाएगी।''

यह हमारे आर्थिक विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा है। यदि खनिज–उत्पादन को एक ओर, एन.एम.पी. 2019 में दी गई पद्धति से विनियमित किया जाना है तथा गवेषण में निराशाजनक निजी क्षेत्र भागीदारी के कारण हमारे संसाधन आधार में धीमी–वृद्धि होती है (कारण पहले ही स्पष्ट किए जा चुके हैं), तो किसी प्रकार के ''मेक इन इंडिया'' पहल के फलितार्थ गंभीर हैं। यही बात निर्यात की संभावनाओं पर भी लागू होती है। यह महत्वपूर्ण है कि सही दृष्टिकोण अपनाया जाए और निजी क्षेत्र को खनन एवं गवेषण और साथ ही आर एंड डी में पूरी तरह प्रोत्साहित किया जाए ताकि वे उद्योग तथा दूसरे खपतकर्त्ता क्षेत्रों को लगातार आपूर्ति करने में समर्थ बन सकें और अंतर–परम्परागत साम्य के उच्च स्तर को प्राप्त करने में सहायक बन सकें।

खण्ड 3 : निष्कर्ष और भावी मार्ग

- **''मेक इन इंडिया'' के खनिज संसाधनों तथा अन्य कच्ची सामग्री प्राप्त करने के लिए विश्वसनीयता की आवश्यकता है:** हमारे भंडारों/संसाधनों में वृद्धि करने के लिए नियामक व्यवस्था के साथ नए खनिज निक्षेपों का पता लगाने हेतु लगातार गवेषण करना खनिज संसाधन सुरक्षा एवं साथ ही हमारी उन्नति की संभावना की कुंजी है। खनिज रियायत प्रणाली के इस लक्ष्य को अधिकतम स्तर तक प्राप्ति के लिए आरंभ किया जाना आवश्यक है।
- **गहराई में स्थित खनिजों का गवेषण विशेष रूप से एक उच्च जोखिम उद्यम है:** पूरी दुनिया में ऐसे गवेषण निजी उद्यम पूंजी द्वारा चलाए जाते हैं और दुर्लभ सार्वजनिक संसाधनों का उपयोग मुख्यतः भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण और मानचित्रों के रूप में प्रतिस्पर्द्धा पूर्व आंकड़ें तैयार करने के लिए किया जाता है।
- **निजी निवेश के लिए गवेषण खोलना :** यह सुनिश्चित करने के लिए कि सरकार अपने ज्ञात प्राकृतिक संसाधनों का उच्च मूल्य प्राप्त करती है, क्षेत्रों का ''आरक्षण'' जो एम.एम.डी.आर. अधिनियम में पहले ही उपलब्ध है, उसका उपयोग अगले 5 से 10 वर्ष में आरंभ हो रहे सरकारी गवेषण के लिए रखा जा सकता है ताकि सार्वजनिक क्षेत्र को आवंटन किया जा सके या नीलामी किया जा सके। शेष क्षेत्रों को खनन के सुनिश्चित अधिकार के साथ निजी क्षेत्र द्वारा गवेषण निवेश के लिए खुला छोड़ दिया जाना चाहिए, जैसी सर्वोच्च अंतर्राष्ट्रीय परम्पराएं हैं।[6]
- **विशिष्ट उद्यम पूंजी आधारित गवेषण कंपनियों को प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है ताकि** वे उन्नत प्रौद्योगिकियों का उपयोग करके गहराई में गवेषण कर सकें। इसमें वे ''जूनियर्स'' शामिल हैं जो ''उच्च जोखिम उच्च प्रतिफल'' परंपरा से संबंधित गवेषण प्रणाली का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। ''केवल नीलामी'' प्रणाली आरंभ करने वाले एम.एम. डी.आर. अधिनियम में संशोधन ने खनन से गवेषण को अलग करके उनकी भागीदारी पर रोक लगा दी है; साथ ही, उसके अधीन बने खनिज (नीलामी) नियमों ने तो वास्तव में जूनियर्स को पी.एल. स्तर के लिए भी बोली लगाने के लिए अपात्र बना दिया है।
- **''विस्तृत क्षेत्र पूर्वेक्षण लाइसेंस (एल.ए.पी.ए.)''** विशेष रूप से, लौह अयस्क बॉक्साइट, चूना–पत्थर आदि (थोक अथवा सतही खनिजों) को छोड़कर, अन्य खनिजों के लिए अलग प्रावधान के साथ गहराई में गवेषण के लिए स्पष्ट रूप से एक अलग चैनल आवश्यक है जो एल.ए. पी.ए. रियायतधारकों को सुनिश्चित तथा सीधे खनन अधिकारों (उनकी अंतरणीयता सहित) दावा करने की अनुमति देता है। यह अकेले ही सुनिश्चित करेगा कि भारत की आर्थिक समृद्धि तथा विकास के लिए तथा उसकी दीर्घावधि खनिज सुरक्षा के महत्व वाले गहराई में स्थित तथा छिपे खनिजों का पता लगाने में नई तथा उन्नत प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल गवेषण में निजी क्षेत्र निवेश का आगमन होगा।
- **ऊपर उल्लिखित एल.ए.पी.ए. के साथ गैर–विवेकाधीन 'सबसे पहले' आधार पर पी.एल. से एम.एल. तक कार्रवाई के अधिकार वाले गैर–विशिष्ट टोही सर्वेक्षण (Reconnaissance) परमिट (एन.ई.आर.पी.)** नए खनिज संसाधनों का पता लगाने में समर्थ हो सकते हैं और खनिज उत्पादन के लिए मुख्य माध्यम होने चाहिए ।
- **नीलामी प्रणाली का प्रयोग केवल पूर्णत[7]: पूर्वेक्षित निक्षेपों के लिए और कैप्टिव** तथा गैर–कैप्टिव खानों के बीच बिना कोई अंतर किए जाना चाहिए ताकि अयस्कों के लिए मुक्त बाजार विकसित हों तथा संसाधनों का उपयोग बाजार शक्तियों को ध्यान में रखते हुए बहुत अधिक दक्षतापूर्वक किया जा सके। इससे पर्यावरण और वन स्वीकृतियां प्राप्त करना आसान हो जाएगा। सरकारी क्षेत्र के मामले में किसी 'कैप्टिव' संसाधन के अनुदान की बजाए 'प्रचालन सिद्धांत' पर खानों का आवंटन होना चाहिए। इससे सार्वजनिक क्षेत्र खुले बाजार में अधिशेष अथवा मूल्य–वर्धित उत्पादों अथवा गैर–उपयोगी ग्रेडों को स्वतंत्र होकर बेच सकेगा।
- **खनिज रियायतों की अवधि बढ़ाने तथा अंतरणीयता की अनुमति देना:** जिन खानों की नीलामी की जाती है उन्हें निक्षेपों के आर्थिक रूप से खनन योग्य भाग की समाप्ति तक प्रत्येक 20 अथवा 30 वर्षों के बाद अवधि बढ़ाकर खनन करने की अनुमति दी जानी चाहिए। इससे खनन काल का स्थायित्व सुनिश्चित होगा और इससे रियायतधारी दीर्घावधि निवेश करने तथा खान योजना बनाने और ग्रेडों का बेहतर उपयोग करने में समर्थ होगा। साथ ही साथ, इस सिद्धांत से अंतर्राष्ट्रीय परम्परा के अनुरूप किसी खान की ''पूर्ण अंतरणीयता'' का सिद्धांत बनाए जाने की आवश्यकता है जो कार्य दक्षता बढ़ाने के लिए विलय और अधिग्रहण को प्रोत्साहित करता है।
- **एक मजबूत तथा अधिक पारदर्शी गवेषण आंकड़ा रिपोर्टिंग अपनाया जाना :** अंतर्राष्ट्रीय रूप से मान्यता प्राप्त जे.ओ.आर.सी. कोड अथवा इसके समकक्ष कोड अपनाया जाना अत्यधिक आवश्यक है ताकि भारत की नीलामी प्रक्रिया को अधिक विश्वसनीय, अतुलनीय, पारदर्शी, समानता तथा निवेश अनुकूल बनाया जा सके। यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है यदि एजेंसियों को एन.एम.ई.टी. निधियों का उपयोग करके परियोजनाओं का पता लगाने के लिए जैसा एन.एम.ई.पी. में प्रस्ताव है, नियोजित किया जाए, तथा साथ ही यदि वे राजस्व कार्य में भाग लेना चाहें और स्वयं नीलामी में भागीदारी भी करना चाहें। जे.ओ.आर.सी. प्रक्रिया के अंतर्गत गवेषण परिणामों तथा ''सक्षम व्यक्ति'' द्वारा अनुमान और मूल्यांकन की नियमित सार्वजनिक रिपोर्टिंग शामिल है जो स्वतंत्र तृतीय पक्षकार होगा।
- **राष्ट्रीय खनिज गवेषण ट्रस्ट का कार्यनीतिक दृष्टि तथा विवेक के साथ केवल वहां उपयोग किया जाना चाहिए,** जहां एक निश्चित सार्वजनिक हित हो जैसे प्रौद्योगिकी धातुओं और ऊर्जा महत्व की धातुओं

[6] अनुबंध 3 देखें

[7] अनंबंध 4 देखें

का उपोत्पाद के रूप में उत्पादन किए जाने की संभावना है। निवेश के संबंध में निवेश संबंधी प्राथमिकताओं का निर्धारण करते समय एन.एम.ई. पी. के पैरा 11.2 का अवश्य पालन किया जाना चाहिए जो आई.बी.एम. को अधिदेश देता है कि वह गवेषण के लिए समय–समय पर राष्ट्रीय प्राथमिकताएं निश्चित करे।

- **जी.एस.आई. के सर्वेक्षण कार्यकलापों एवं गवेषण के बीच उचित संतुलन रखा जाना चाहिए** ; बेसलाईन आंकड़ें जो हमारे संसाधन एवं भंडार आधार के लिए अत्यधिक मूल्यवान प्रतियोगिता–पूर्व के आंकड़ें प्रस्तुत करते हैं वे दीर्घावधि महत्व के होते हैं और उनकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए।
- **अब समय आ गया है कि स्वतंत्र खनन विनियामक प्राधिकरणों और न्यायाधिकरणों की स्थापना की जाए ताकि वे केंद्रीय तथा राज्य स्तर पर निगरानी के लिए** आमतौर पर खनन क्षेत्र में जटिल और व्यापक स्तर पर विनियामक कमियों का समाधान करें, (जो अधिनियम की धारा 30 के अधीन ''खानों'' में ''पुनरीक्षा'' कार्य तंत्र का स्थान लेगा)। इससे निवेशकों का विश्वास वापस आ सकता है तथा यह सुनिश्चित कर सकता है कि गवेषण के लिए प्राथमिक विनियामक कार्य तंत्र (और साथ ही खनन योजनाएं तथा खनन समापन योजनाएं) अंतर्राष्ट्रीय रूप से स्वीकृत तकनीकी मानदण्डों के अनुरूप पारदर्शिता एवं विश्वसनीय रूप से कार्य कर सकें।
- **अंतर–परम्परागत साम्य नकारात्मक अवधारणा के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए** जिससे भावी पीढ़ियों के लिए ज्ञात भंडार टुकड़ों में वितरित कर दिए जाएं अपितु संसाधन आधार बढ़ाने के लिए एक सकारात्मक अवधारणा हो जिसमें भावी पीढ़ियों द्वारा उपयोग हेतु उत्पादन से राजस्व धारा के एक भाग पर अधिकार हो। एक ओर, जी.एस.आई. के सर्वेक्षण कार्य तथा एल.ए.पी.ए. आंकड़े संभावित भंडार आधार को समझने के लिए अति–आवश्यक हैं उन्हें प्राथमिकता दिए जाने की आवश्यकता है। दूसरी ओर, जिला खनिज निधि में आने वाली निधियों को 'धन निधि' के सृजन के लिए एक भाग को अंतर–परम्परागत साम्य के समाधान हेतु उपयोग किए जाने के लिए प्राप्त किया जाना चाहिए।

संदर्भ

1. खान और खनिज (विकास और विनियम) अधिनियम, 1957 http://ibm.nic.in/writereaddata/files/07102014115602MMDR%20Act%201957_10052012.pdf
2. खनिज नीति संबंधी उच्चस्तरीय समिति (होडा समिति) रिपोर्ट 2006 http://planningcommission.gov.in/reports/genrep/rep_nmp.pdf
3. खान मंत्रालय का कार्यनीति पत्र 'भारतीय खनिज क्षेत्र की संभावनाओं को उजागर करना' 2011 में प्रकाशित https://mines.gov.in/writereaddata/UploadFile/Strategy%20Paper%20for%20Ministry%20of%20Mines.pdf
4. राष्ट्रीय खनिज नीति 2008 https://mines.gov.in/writereaddata/Content/88753b05_NMP2008[1].pdf
5. खान और खनिज (विकास और विनियम) विधेयक 2011 https://www.prsindia.org/sites/default/files/bill_files/Mines_110_of_2011.pdf
6. खान और खनिज (विकास और विनियमन) अधिनियम 1857 (2015 और 2016 में यथा संशोधित) https://ibm.gov.in/writereaddata/files/07052018100905mmdr%20pdf.pdf
7. खनिज (नीलामी) नियम, 2015 https://mines.gov.in/writereaddata/UploadFile/Mineral%20(Auction)%20Rules,%202015.pdf
8. खनिज (खनिज तत्वों का साक्ष्य) नियम, 2015 https://ibm.gov.in/writereaddata/files/06232017113737Minerals_Evidence_of_Mineral_Contents_Rules_2015.pdf
9. खनिज (एन.ई.आर.पी.) नियम, 2015 https://mines.gov.in/writereaddata/UploadFile/NERP%20Rules,%202015.pdf
10. खनिज (सरकारी कंपनियों द्वारा खनन) नियम, 2015 https://www.mines.gov.in/writereaddata/UploadFile/Government%20company%20rule.pdf
11. राष्ट्रीय खनिज गवेषण नीति (एन.एम.ई.पी.) 2016 https://mines.gov.in/writereaddata/Content/NMEP.pdf
12. राष्ट्रीय खनिज नीति 2019, https://mines.gov.in/writereaddata/Content/NMP12032019.pdf
13. भारत के राष्ट्रपति द्वारा (भारतीय संविधान के अनुच्छेद 143 (1) के अधीन 2012 का विशेष संदर्भ 1) एक संदर्भ में दिनांक 27 सितंबर, 2012 की उच्चतम न्यायालय की राय, https://www.sci.gov.in/pdf/SupremeCourtReport/2012_v9_pii.pdf
14. भारतीय विनिर्माण क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण गैर–ईंधन खनिज संसाधन : 2030 के लिए एक विज़न : ऊर्जा, पर्यावरण एवं जल परिषद (सी.ई.ई.डब्ल्यू.) 2016 http://www.dst.gov.in/sites/default/files/CEEW_0.pdf

परिशिष्ट 2 से 4 में उल्लिखित सामग्री के लिए निम्नलिखित दस्तावेज देखिए :

1. भारत में गहराई में स्थित धात्विक निक्षेपों के स्थल एवं विकास–प्रौद्योगिकी–आर्थिक खनिज नीति केंद्र–(सी–टेम्पो) खान मंत्रालय (जनवरी 2011)
2. खनिज गवेषण अवधारणा तथा दिशा–निर्देश संबंधी नई अंतर–दृष्टि–भारतीय भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण, खान मंत्रालय

अनुबंध 1

2020 तक समाप्त होने वाले राज्य–वार पट्टे

क्रम सं.	राज्य	कार्यरत खानें	गैर–कार्यरत् खानें	कुल खानें	कुल नीलामी योग्य खानें
1	आंध्र प्रदेश	3	6	9	9
2	गोवा	0	184	184	उपलब्ध नहीं
3	गुजरात	5	6	11	7
4	हिमाचल प्रदेश	1	1	2	2
5	झारखण्ड	5	16	21	18
6	कर्नाटक	8	42	50	33
7	मध्य प्रदेश	1	12	13	2
8	महाराष्ट्र	0	9	9	उपलब्ध नहीं
9	उड़ीसा	24	7	31	31
10	राजस्थान	2	2	4	2
कुल		49	285	334	104

स्रोत : खान मंत्रालय https://mines.gov.in/writereaddata/ploadFile/cceo01102018.pdf

अनुबंध 2

देश–वार गवेषण व्यय

देश	2013	2014	2015	2016	2017
कनाडा	1.88	1.51	1.28	0.96	1.11
आस्ट्रेलिया	1.88	1.30	1.09	0.90	1.08
चीन	0.57	0.70	0.54	0.41	0.40
पेरू	0.72	0.54	0.54	0.41	0.56
ब्राजील	0.04	0.30	0.27	0.28	0.24
वैश्विक	14.43	10.74	9.20	6.97	7.95

टिप्पणी : वित्तीय वर्ष 2016,2017 तथा 2018 के लिए भारत का गवेषण व्यय क्रमशः 13, 0.15 तथा 0.17 अमरीकी डालर था। इसमें जी.एस.आई., एम.ई.सी.एल. तथा एन.एम.ई.टी. द्वारा किया गया व्यय शामिल है। इसके अतिरिक्त, सी.एम.पी.डी.आई.एल., परमाणु ऊर्जा विभाग और राज्य डी.एम.जी. भी गवेषण पर पर्याप्त व्यय करते हैं।

स्रोत: 1) एस एंड पी ग्लोबल मार्किटिंग इंटेलीजेंस, 2018

2) भारत के लिए : खान मंत्रालय

अनुबंध 3

अलग–अलग स्थानों में खनिज गवेषण अनुदान पद्धति

क्रम सं.	देश	अनुदान पद्धति	आरंभिक खनन पट्टा अवधि	नवीकरण पद्धति
1	अर्जेंटीना	एफ.सी.एफ.एस.	खनिज समाप्ति तक	–
2	बोलिविया	एफ.सी.एफ.एस.	30 वर्ष	30 वर्ष
3	बोत्सवाना	एफ.सी.एफ.एस.	25 वर्ष	25 वर्ष
4	ब्राजील	एफ.सी.एफ.एस.	खनिज समाप्ति तक	–
5	कनाडा	एफ.सी.एफ.एस.	20 वर्ष	10 वर्ष
6	चिली	एफ.सी.एफ.एस.	खनिज समाप्ति तक	–
7	कोलंबिया	एफ.सी.एफ.एस.	30 वर्ष	30 वर्ष
8	घाना	एफ.सी.एफ.एस.	30 वर्ष	30 वर्ष
9	मेक्सिको	एफ.सी.एफ.एस.	50 वर्ष	50 वर्ष
10	नामीबिया	एफ.सी.एफ.एस.	25 वर्ष	15 वर्ष
11	पेरू	एफ.सी.एफ.एस.	30 वर्ष	अनुरोध पर अवधि विस्तार
12	अमरीका	एफ.सी.एफ.एस.	खनिज समाप्ति तक	–
13	दक्षिण अफ्रीका	एफ.सी.एफ.एस.	30 वर्ष	30 वर्ष
14	दक्षिण आस्ट्रेलिया	एफ.सी.एफ.एस.	21 वर्ष	21 वर्ष
15	पश्चिम आस्ट्रेलिया	एफ.सी.एफ.एस.	21 वर्ष	21 वर्ष
16	मंगोलिया	एफ.सी.एफ.एस.	30 वर्ष	20 वर्ष लगातार दो अवधियों के लिए
17	मोटिटैनिया	एफ.सी.एफ.एस.	30 वर्ष	उपलब्ध नहीं
18	मोरक्को	एफ.सी.एफ.एस.	10 वर्ष	10 वर्ष
19	मौजाम्बिक	एफ.सी.एफ.एस.	25 वर्ष	25 वर्ष
20	चीन	–एफ.सी.एफ.एस. अगवेषित क्षेत्रों के लिए – नीलामी पहले ही गवेषित क्षेत्रों के लिए	–30/20/10 वर्ष बड़ी/मध्यम/लघु खानों के लिए	अनुरोध पर अवधि विस्तार
21	इंडोनेशिया	नीलामी	–20/10 वर्ष धात्विक/गैर धात्विक खनिजों के लिए	अलग–अलग खनिजों के लिए अलग–अलग नवीकरण अवधि
22	रूस	नीलामी	25 वर्ष	अनुरोध पर अवधि विस्तार
23	भारत	नीलामी	50 वर्ष	नवीकरण नहीं

एफ.सी.एफ.एस. – पहले आओ पहले पाओ

स्रोत: फिमी

अनुबंध 4*

खनिज संसाधन निविदाएं और खनन अवसंरचना विकास

लेखक : माइकल स्टेनली और एकातेरीना मिखेलोवा

अध्याय 2 का उद्धरण: खनिज अधिकारों का अनुदान

गवेषण तथा/अथवा विदोहन के खनिज अधिकारों के अनुदान के लिए इन दो में से एक मुख्य प्रक्रियाओं का पालन किया जाता है : मुक्त खनिज प्राप्ति (पहले आओ पहले पाओ सिद्धांत) तथा प्रतिस्पर्द्धात्मक संसाधन निविदाएं .....

चयनित प्रक्रिया खनिज मदों की किस्म, संसाधन का उपलब्ध सूचना स्रोत और निक्षेप का स्वरूप (संरचना वाले निक्षेप बनाम विभिन्न स्थल (स्वरूपों में स्थित), तथा अनुदान के अवसर पर निवेशकर्त्ता की अभिरूचि की क्षमता के अनुसार निर्धारित की जाएगी।)

मुक्त खनिज प्राप्ति

जब संसाधन संपत्ति के बारे में अपेक्षाकृत कम जानकारी होती है और निक्षेप के लिए कोई प्रतिस्पर्द्धा नहीं होती है, अनेक सफल खनन देश – जैसे आस्ट्रेलिया, संयुक्त राज्य अमरीका, विभिन्न लातीनी अमरीकी देश और अब कई अफ्रीकी देश मुक्त खनिज पहुंच (पहले आओ, पहले पाओ) प्रक्रिया अपनाते हैं। इस दृष्टिकोण के अधीन लाइसेंसधारियों को लाइसेंस क्षेत्रों के लिए समयबद्ध पहुंच होती है। अनुदान प्रावधान गवेषण कार्य को शीघ्र करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। उदाहरण के लिए, बाध्यकारी गवेषण कार्य का लाइसेंस क्षेत्र के कुछ भाग का अनिवार्य अभ्यर्पण तथा/अथवा कुछ समय में भूमि किराया शुल्क में वृद्धि करना यह सुनिश्चित करता है ताकि कंपनियां शीघ्र गवेषण कार्य करें और उन क्षेत्रों को वापिस लौटा दें जिन्हें वे उपयुक्त नहीं पाते ताकि अन्य कंपनियां गवेषण आंकड़ें प्राप्त कर सकें और क्षेत्र अथवा निक्षेप में अपनी रूचि दिखा सकें।

मुक्त खनिज प्राप्ति बड़े–बड़े खोज क्षेत्रों में पूर्वेक्षण कार्य आकर्षित करने में सफल रही है और अंततः उससे और अधिक पूर्वेक्षण स्थलों के लघु क्षेत्रों पर गवेषण अधिकार (लाइसेंस) दिए गए हैं।

प्रतिस्पर्द्धात्मक निविदा

दूसरा दृष्टिकोण – प्रतिस्पर्द्धात्मक निविदा–व्यापक रूप में खनिज संभावनाओं की अपेक्षाकृत अधिक जानकारी की स्थिति में की जाती है (या तो पूर्व गवेषण अथवा खनन कार्यकलापों अथवा यह मान्यता कि कुछ खनिज विशिष्ट भू–वैज्ञानिक संरचनाओं में मिलने की संभावना होती है) तथा अधिकारों के लिए अधिक मांग जैसाकि अनेक कंपनियां एक ही लाइसेंस क्षेत्र में आवेदन करने में इच्छुक हैं।

अनेक थोक कमोडिटी खनिजों (जैसे लौह अयस्क), कोयला, औद्योगिक खनिज (जैसे फास्फोराइट) और निर्माण सामग्रियों के खनन का अधिकार कभी–कभी संसाधन निविदाओं अथवा रियायत पट्टों के माध्यम से आवंटित किए जाते हैं। इसमें निक्षेपों की संस्तरीय स्वरूप का बड़ा हाथ होता है। जब भू–वैज्ञानिक उत्खनन द्वारा धारण अधिकार के आधार पर किसी निक्षेप की प्राप्ति का सत्यापन हो जाता है तो संलग्न संसाधनों की प्राप्ति की उसी भू–संरचना के भीतर और समान भू–वैज्ञानिक विशेषताओं के साथ अधिक संभावना होनी चाहिए। रियायतों को क्रमबद्ध आधार पर पट्टे पर देने के बारे में एक प्रतिस्पर्द्धात्मक लाइसेसिंग प्रक्रिया अधिक तकनीकी एवं वित्तीय रूप से योग्य निवेशकों के लिए निर्धारित मानक के आधार पर किया जाता है। इससे मुक्त खनिज प्राप्ति प्रक्रिया से बेहतर व्यक्ति या कंपनी का चयन हो सकता है।

कुछ मामलों में, किसी विशिष्ट खनिज निक्षेप के लिए प्रदत्त खनिज प्राप्ति लाइसेंस (किसी छिपे निक्षेप) को विनियामक कार्यवाही के माध्यम से समाप्त अथवा रद्द कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति में भी सरकार खनन अधिकार को एक संसाधन निविदा में परिवर्तन करने का अवसर ले सकती है।

यह परिवर्तन तभी हो सकता है यदि पिछले गवेषण प्रयासों से संसाधन संपत्ति की मात्रा और गुणवत्ता के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर ली गई हो, और अगला निवेशक गवेषण जोखिम की पर्याप्त मात्रा में कमी का लाभ उठाएगा। जब यह स्थिति उत्पन्न हाती है, तब सरकार खनिज अधिकारों के साथ–साथ प्रदत्त जानकारी के बदले में अग्रिम संसाधन किराए का हिस्सा प्राप्त कर सकती है।

---

* विश्व बैंक: विकास क्रम में खनन उद्योग रु 22 (सितंबर, 2011) :

[6] यह ''छिपे निक्षेपों'' धात्विक खनिजों का मामला हो सकता है। मूल्यवान तथा आधार धातुओं को आमतौर पर छिपे निक्षेप माना जाता है,। इस मामले में वे गहराई में मिलते हैं और इनकी सतही प्रकटीकरण होने की संभावना कम होती है। अतः संवेदी महंगी प्रौद्योगिकियों की सहायता के बिना भूमिगत संसाधनों की संभाव्यता के बारे में जानकारी नहीं मिल सकती (यह फुट नोट मूल पाठ का भाग है)।

APPENDIX 1

Glossary of Technical Terms

Aero-EM: Airborne electromagnetic (EM) surveying is an active method to measure the electrical conductivity of the rocks. This gives a better idea of the Earth's structure and the arrangement of deposits at depth. The survey requires a source of EM field, which is generated using a large transmitter coil, fixed onto a helicopter or a light fixed-wing aircraft. There is also a "receiver" on board, which measures the EM response. During the survey, the aircraft needs to fly as close to the ground as possible to get more signal back from the Earth, although regulatory and safety issues come into play here when it comes to the practicality of what's permitted and what's not. The survey is carried out by flying in parallel lines as it helps with the processing of the data.

Aero-magnetic survey: In an aero-magnetic survey, an onboard magnetometer measures and records the total intensity of the magnetic field at the sensor. The resulting aeromagnetic map shows the spatial distribution and relative abundance of magnetic minerals (most commonly the iron oxide mineral magnetite) in the upper levels of the Earth's crust. Because the rock types differ in their content of magnetic minerals, the magnetic map allows a visualization of the geological structure of the upper crust in the subsurface, particularly the spatial geometry of bodies of rock and the presence of faults and folds. Aeromagnetic data is commonly expressed as thematic (coloured) and shaded computer generated pseudo-topography images. The apparent hills, ridges, and valleys are referred to as aeromagnetic anomalies. A geophysicist can use mathematical modelling to infer the shape, depth, and properties of the rock bodies responsible for the anomalies.

Aero-Radiometric survey: The radiometric, or gamma-ray spectrometric method is a geophysical process used to estimate concentrations of potassium, uranium, and thorium by measuring the gamma-rays which the radioactive isotopes of these elements emit during radioactive decay. Airborne gamma-ray spectrometric surveys estimate the concentrations of the elements at the Earth's surface by measuring the gamma radiation above the ground from low-flying aircraft or helicopters.

Airborne Gravity survey: Gravity gradiometry is used by oil and mineral prospectors to measure the density of the subsurface, effectively by measuring the rate of change of gravitational acceleration due to underlying rock properties. From this information, it is possible to build a picture of subsurface anomalies which can then be used to more accurately target oil, gas, and mineral deposits. It is also used for determining water depth. The gravity gradiometer is mounted on an aircraft and flown over the survey area to obtain the gravity gradient measurements. The survey is typically flown at an altitude of 80 m or greater with a line spacing dependent on the target of investigation. The signature from buried sources (such as ore bodies) is maximized closer to the Earth surface and a low flying altitude is desirable.

Basement rock: Basement rock is the thick foundation of ancient metamorphic and igneous rocks often in the form of granite, that forms the underlying layer of continents.

Beneficiation: Beneficiation is the processing of minerals or ores for the purpose of (i) regulating the size of a desired mineral produce; (ii) removing unwanted constituents; and (iii) improving quality, purity, or assay grade of the desired mineral.

"Bulk" and near-surface minerals: Minerals occur through a variety of processes. Some minerals are formed by sedimentary processes and are deposited in basins which occur at the Earth's surface. These include limestone and some kinds of iron ore deposits. Some minerals such as Bauxite are formed by weathering processes. Such minerals generally occupy large surface areas and are often called "bulk" minerals. Very often they are available at or near the surface.

Chalcophile elements are those elements which have a strong affinity for sulphur; such elements concentrate in sulphides and are typical of the Earth's mantle rather than its core. Typical chalcophile elements are Cu, Zn, Pb, As, and Sb. In contrast, **Lithophile** elements are those with a strong affinity for oxygen. They occur as oxides, and

especially in the silicate minerals which make up 99% of the crust. Examples of lithophile elements are Al, Ti, Ba, Na, K, Mn, Fe, Ca, and Mg.

Concealed, deep-seated, or deep-located deposits: Mineralization often occurs at depth, with no apparent surface shows. In other cases, mineralization, even if extensive, is hidden by subsequent sedimentary layers ("cover sediments"), or concealed by lava flows as in the case of the Deccan Trap areas. Deep seated minerals are formed under high pressure and temperature, and in many cases, through the chemical action of hot mineralizing fluids (hydrothermal action) associated with volcanism or tectonism. These minerals, including base metals such as copper, and noble metals such as gold, and special cases such as diamonds can occur at considerable depths.

Co-production of minor metals: Minor metals (including the so-called Energy Critical Metals) are not naturally found in concentration high enough to be profitably mined for their own sake. Many of them also occur in association with other metals which can be commercially mined (primary or major metals, such as lead-zinc-copper or gold or aluminum). Such associated minor metals can be recovered as by-products from the "waste" generated during the extraction of the major metals. Many minor metals are finding applications in renewable energy or electronics and though used in small quantities, can be quite critical. 'Major' minors include tungsten, cobalt, titanium, magnesium, where several hundred thousand tonnes are produced annually. Their production requires "process research" so as to put in place an ore-specific combination of physical and chemical processes to separate them from other material. There can be substantial risks and technical- and economic-feasibility questions associated with process research.

Crust: The continental crust is the layer of igneous, sedimentary, and metamorphic rocks that forms the continents and the adjoining areas of shallow seabed known as continental shelves.

Cratons are the old and stable parts of the crust (and the uppermost mantle), which having survived cycles of merging and rifting of continents, are distinct formations composed of ancient basement rock, often covered by younger sedimentary rocks. The Indian Craton is made up of the Aravalli Craton, Bundelkand Craton (granite-gneissic complex), Dharwar Craton, Singhbhum Craton, and the Bastar Craton.

Deccan trap: The Deccan traps are a large igneous province located on the Deccan Plateau of west-central India. They are one of the largest volcanic features on Earth. They consist of multiple layers of solidified flood basalt that together are more than 2000 m thick and cover an area of 500,000 km2. The bulk of the volcanic eruption occurred at the Western Ghats some 66 million years ago. This series of eruptions may have lasted fewer than 30,000 years.

Exploration

General Exploration involves the initial delineation of an identified mineral occurrence warranting further studies. Methods used include surface mapping, widely spaced sampling, trenching, and drilling for preliminary evaluation of mineral quantity and quality (including mineralogical tests on laboratory scale if required), and limited interpolation based on indirect methods of investigation. The objective is to establish the main geological features of a deposit, thereby giving a reasonable indication of continuity and providing an initial estimate of size, shape, structure, and grade. The degree of accuracy should be sufficient for deciding whether a Prefeasibility Study and a Detailed Exploration are warranted.

Detailed Exploration involves the detailed three-dimensional delineation of a known mineral deposit through sampling from outcrops, trenches, boreholes, shafts, and tunnels. Sampling grids for drilling are closely spaced such that size, shape, structure, grade, and other relevant characteristics of the deposit are established with a high degree of accuracy. Processing tests involving bulk sampling may be required.

Geoscientific survey and mapping is to be distinguished from "mineral exploration"; while the latter is specifically aimed at finding minerals, geoscientific surveys have a multitude of applications including subsurface water resource location and estimation; identifying potential geo-hazards such as landslides; the nature of rocks and

soils; and understanding the topography and climate of the distant past. Very often, mineral exploration ventures use geoscientific surveys as a starting point for the identification of a target area for exploration.

Hydrothermal mineral deposit is any concentration of metallic minerals formed by the precipitation of solids from hot mineral-laden water (hydrothermal solution). The solutions are thought to arise in most cases from the action of deeply circulating water heated by magma. Hydrothermal mineral deposits are further classified as hypothermal, mesothermal, epithermal, and telethermal according to the temperature of formation, which roughly correlates with particular mineralizing fluids, mineral associations, and structural styles.

Intrusive or plutonic igneous rocks form when magma cools slowly below the Earth's surface. They are called intrusive igneous rocks if the magma has intruded into pre-exiting rock layers. Most intrusive rocks have large, well-formed crystals. Examples include granite, gabbro, diorite, and dunite. Igneous rocks are generally granites or basalts. The difference between **granites and basalts** is in their silica content (a basalt is about 53% SiO2, whereas granite is 73%), and in their rates of cooling.

IOCG: Iron Oxide hosted Copper Gold deposits

Laterite: A rock type rich in iron and aluminium; commonly considered to have formed in hot and wet tropical areas by intensive and prolonged weathering.

Leaching is the loss or extraction of certain materials from a carrier into a liquid (usually, but not always a solvent).

Low grade ores: the grade of the ore generally refers to the concentration of the mineral of interest in the mineral ore. As the grade drops, the economic viability of a mining enterprise also drops. When the grade of the ore is such that the economic viability is a significant risk, the ore is generally said to be of "low grade".

Mafic: a rock that is rich in Magnesium and iron (Ferric). Ultramafic rocks are igneous and meta-igneous rocks with a very low silica content (less than 45%), generally >18% MgO, high FeO, low potassium, and are composed of usually greater than 90% mafic minerals (dark coloured, high magnesium and iron content). The Earth's mantle is composed of ultramafic rocks.

Magma is molten rock stored inside the Earth's crust. Lava is magma that reaches the surface of the earth through a volcano vent.

Magnetotellurics (MT) is an electromagnetic geophysical method for inferring the Earth's subsurface electrical conductivity from measurements of natural geomagnetic and geoelectric field variation at the Earth's surface. Investigation depth ranges from 300 m below ground by recording higher frequencies down to 10,000 m or deeper. MT is used for various base metals (e.g., nickel) and precious metals exploration, as well as for kimberlite mapping. Audio-magnetotellurics (AMT) is a higher-frequency magnetotelluric technique for shallower investigations.

Metalliferous: meaning yielding metal; from *metallum* metal + *ferre* to bear (Latin).

Metallogeny is the study of the genesis and distribution of mineral deposits

Metasomatism is the chemical alteration of a rock by hydrothermal and other fluids.

Mineral: A mineral is a naturally occurring substance (generally inorganic, though coal is an organic mineral) that is solid and is representable by a chemical formula. It has an ordered atomic structure. It is different from a rock, which can be an aggregate of minerals or non-minerals and does not have a specific chemical composition. Most but not all minerals are crystalline; also, most but not all minerals have one or more metals as constituents.

Mineral resource: A mineral resource is a concentration or occurrence of solid material of economic interest in or on the Earth's crust in such form, grade, or quality and quantity that there are reasonable prospects for eventual economic extraction.

Mineral reserve (or Ore Reserve): A mineral reserve or an ore reserve is the economically mineable part of a mineral resource.

Mineral ore: An ore is a type of rock or rocky material that contains sufficient minerals with important elements including metals that can be economically extracted from the rock through mining operations. An ore body is the assemblage of such a rocky material.

Mineralization: Mineralization is the process of formation of a mineral out of unmineralized material or a concentration of the mineral above its normal abundance due to geological processes involving heat, pressure, chemical action, sedimentation, etc.

Mineral occurrence: This is an indication of mineralization that is worthy of further investigation. The term "mineral occurrence" only indicates the presence of one or more minerals but does not imply any measure of volume or tonnage, grade or quality and is thus not a part of a mineral resource yet.

Mineral deposit: A mineral occurrence of relatively higher concentration, of economic value.

Mining operation: A mining operation is any operation undertaken for the purpose of winning (i.e., recovering) any mineral. It generally includes extracting the ore and then processing it to recover the minerals in the ore.

Mining lease: A lease granted over a limited area for the purpose of undertaking mining operations.

Mining Tenement System: Such a system depicts the location, extent, nature, and status of current mineral concessions ("tenements"), and often allows for applications to be made for the grant of mineral concessions in areas not already covered. Sometimes the system also shows pending applications as well. The system may also show land ownership ("cadastre") and other legal information, such as officially notified forests or ecologically sensitive areas, for the benefit of intending applicants.

Orogen: An orogen or orogenic belt develops when a continental plate crumples and is pushed upwards to form one or more mountain ranges; this involves a series of geological processes collectively called orogenesis or orogeny. Orogeny is the primary mechanism by which mountains are built on continents. The Himalayas, which stretch over 2400 km are the result of an ongoing orogeny (the Himalayan Orogeny) — the result of a collision of the continental crust of two tectonic plates: the Indian and Eurasian continental plates.

A **placer deposit** or **placer** is an accumulation of heavier minerals by gravity separation from a specific source rock during sedimentary processes, e.g., river or sea wave action. The name is from the Spanish word placer, meaning "alluvial sand"

Paleo-placers: Placer deposits caused by ancient (paleo) processes no more in operation, e.g., geologically ancient river or sea no longer in existence.

A **Pegmatite** is an igneous rock, formed underground, with large interlocking crystals. Most pegmatites are composed of quartz, feldspar, and mica.

Petrology is the branch of geology that studies rocks and the conditions under which they form.

Porphyry is a textural term for an igneous rock consisting of large-grained crystals such as feldspar or quartz. Porphyry deposits are formed when a column of rising magma is cooled in two stages. In the first stage, the magma is cooled slowly deep in the crust, creating the large crystal grains. In the second and final stage, the magma is cooled rapidly at relatively shallow depth or as it erupts from a volcano.

Prospecting: Is any operation undertaken for the purpose of exploring, locating, or proving a mineral deposit, including geochemical and geophysical surveys, and drilling.

It is the systematic process of searching for a mineral deposit by narrowing down areas of promising enhanced mineral potential. The methods utilized are outcrop identification, geological mapping, and indirect methods, such as geophysical and geochemical studies. Limited trenching, drilling, and sampling may be carried out. The objective is to identify a deposit which will be the target for further exploration. Estimates of quantities are inferred, based on the interpretation of geological, geophysical, and geochemical results.

A Prospecting Licence granted under the MMDR Act permits general exploration as well as detailed exploration.

Proterozoic is a geological eon spanning the time from the appearance of oxygen in Earth's atmosphere to just before the proliferation of complex life (such as trilobites or corals) on the Earth. The Proterozoic Eon extended from 2500 mya to 541 mya (million years ago).

Prospectivity for minerals: This is a general assessment of the likelihood of finding minerals, based on the geological evolutionary history and geological set up (lithological, structural, and geomorphological) and geophysical, aeromagnetic, gravity, and radiometric imagery data sets.

Reconnaissance: Any operations undertaken for the preliminary prospecting of a mineral through regional, aerial, geophysical, or geochemical surveys and geological mapping, but does not include pitting, trenching, drilling, or sub-surface excavation.

A reconnaissance study identifies areas of enhanced mineralization on a regional scale based primarily on results of regional geological studies, regional geological mapping, airborne and indirect methods, preliminary field inspection, as well as geological inference and extrapolation. The objective is to identify mineralized areas worthy of further investigation towards mineral deposit identification. Estimates of the quantities should only be made if sufficient data is available.

Shield: A shield is a cratonic area where the basement rocks are exposed. It is a relatively flat region since mountain building, faulting, and other tectonic processes are greatly diminished. The age of these rocks is greater than 570 million years and sometimes date back 2000 to 3500 million years. The Indian shield consists of the Dharwar craton, the Southern Granulite Terrain (SGT) of Tamil Nadu - Kerala, the Eastern Ghat Mobile Belt (EGMB) along the east coast; and the intra-cratonic "Purana" basins.

Stratigraphy is the study of rock layers (strata) and layering (stratification). It is primarily used in the study of sedimentary and layered rocks, primarily to estimate the age of the various layers.

Supergene enrichment are processes that occur relatively near the surface (as opposed to deep hypogene processes). Supergene processes include the predominance of meteoric water (e.g., rainwater) circulation with concomitant oxidation and chemical weathering.

Unconformity: An unconformity is a surface of hiatus between successive strata representing a missing interval in the geologic record of time, produced either by an interruption in deposition or by erosion (by wind or water). An unconformity is a type of discontinuity due to an intervening period of geological activity for which the strata have no direct record.

Volcanogenic massive sulfide deposits, also known as VMS deposits, are a type of metal sulfide ore deposit, mainly copper-zinc which are created by volcanic-associated hydrothermal events in submarine environments.

Winner's Curse: The winner's curse is a phenomenon that may occur in "highest bid" auctions in conditions of incomplete information. In such an auction, the winner will tend to overpay as he is after all paying what his competitors felt was not worth it since they stopped at a lower bid.

Genesis and Classification of Mineral Deposits

An ore or mineral deposit represents a geochemically anomalous concentration of elements in a very limited sector of the crust. Geological processes causing crustal growth and churning of the Earth's material lead to elemental concentration and formation of deposits. The crustal elements have to undergo enrichment up to several orders to attain the status of an economically minable deposit. The genesis of economic deposits is therefore, essentially a matter of sufficient enrichment.

Ore deposits are usually classified by the ore forming geological processes and the geological setting. But they rarely fit snugly into the boxes in which geologists wish to place them. Many deposits may be formed by more than one of the basic genetic processes described below. The following is a common categorization of mineral enrichment and deposit formation; examples of deposits are given in some cases in parenthesis:

1. **Deposits produced by chemical processes of concentration of elevated temperature within the Earth or at the sea floor.**

In magmas (Magmatic Deposits)

- By concentration of crystals from magma (chromite and magnetite of Bushveld complex, South Africa)
- By separation of immiscible sulphide or oxide liquids from magma (Cu-Ni at Sudbury, Ti at Allard Lake, Quebec)
- By crystallization of unusual magmas
  - ◊ Carbonatites (Nb at Aka, Onebee.; Cu and Phosphate at Palabora, South Africa)
  - ◊ Pegmatites (Nb-Ta in Nigeria; mica at Petaca, New Mexico, USA; Li at Kings Mtn, N, Carolina, USA)

From hot aqueous fluid formed within the Earth (hydrothermal deposits)

- Deposited within the Earth and associated with intrusive igneous bodies or volcanic centres
  - ◊ Disseminated sulphides in and adjacent to igneous bodies (porphyry.- CuMo deposits of Bingham, Utah, USA)
  - ◊ Contact metasomatic replacement of carbonate rocks (skarn[9] deposits of Fe at Iron Springs, Utah USA; Cu-Pb-Zn at Central District, New Mexico)
  - ◊ Vein and replacement deposits
    - In and adjacent to granitic intrusions (Sn-Cu at Cornwall, England)
    - Peripheral to granitic intrusions (Cu at Magma, Arizona, USA; Pb-Zn, Ag of Central District, New Mexico, USA; Pb-Ag of Cocur d' Alene, Idaho, USA)
    - Associated with volcanic centres and hot spring system on land (Ag at Pachuca, Mexico; Au at Carlin, Nevada, USA)
    - Cu associated with basaltic volcanism (northern Michigan Cu, Michigan, USA)

Deposited within the Earth but with no obvious relation to igneous activity

- Pb-Zn sulphide deposits in carbonate rocks (Mississippi Valley deposits, USA.) Udeposits in sandstones (Colorado Plateau, USA)
- Cu deposits associated with red sediments (Nacimiento, New Mexico and WhitePine, Michigan)

Deposited on the sea floor by fluids from hot springs

- Massive Fe-sulphides with base and precious metals, in association with volcanism (volcanogenic massive sulphides, Kuroko deposits, Japan)
- Base-metal sulphides unrelated to volcanism (Cu at Ducktown, Tennessee USA)
- Extensive Fe- and Mn-rich deposits with associated Au and other metals (as in pre-metamorphic carbonate beds at Homestake, S. Dakota, USA)
- By regional or dynamic metamorphism
  - ◊ By redistribution of chemical constituents (talc and tremolite deposits, concentration of Au at Homestake, S. Dakota, USA)
  - ◊ By recrystallization (garnet, kyanite)

[9] *Lime-bearing siliceous rock produced by the metamorphic alteration of limestone or dolomite*

2. Deposits formed by chemical processes of concentration at or near the surface of the Earth at low temperatures.

By weathering and related processes on land

- By leaching of soluble constituents to leave residual concentrations (bauxite, Fe-, Mn-, and Ni-rich laterites)
- By supergene enrichment of sulfides (Cu at Miami, Arizona, USA)
- By evaporation of pore waters from soil (U in caliche[10] at Yeelerie, Australia)

By precipitation in lakes and oceans

- By evaporation of water (evaporites, gypsum, halite, borates)
- By chemical changes in solution
- Precipitation of limestones and dolomites
- Unusual precipitates (Fe formation, Mn nodules, phosphates, basemetal sulphides)
- By biological processes and diagenesis
  - ◊ Accumulation of plant debris (e.g., coal)
  - ◊ Formation of liquid and gaseous products from plant and animal debris (oil and gas deposits)
  - ◊ Conversion of sulphates to native sulphur (sulphur deposits)

3. Deposits produced by mechanical processes of concentration

- Concentration by size in flowing water (gravels, sands, clays)
- Concentration of dense minerals by flowing water (placer deposits of Au, Pt. Sn, diamond)

As ores of the same metal can be formed by multiple processes, the commodity-wise genesis of common metalliferous ores is presented briefly.

- **Lead-Zinc-Silver**

  Lead and zinc deposits are formed by discharge of deep sedimentary brine onto the sea floor (termed Sedimentary Exhalative or SEDEX), or by replacement of limestone (termed as Mississippi valley type), in skarn deposits, some associated with submarine volcanoes (called Volcanogenic Massive Sulphide or VMS deposits) or in the aureoles of sub-volcanic intrusions of granite. The vast majority of SEDEX lead and zinc deposits are Proterozoic in age.

- **Copper**

  Copper occurs in association with many other metals and in varied deposit styles. Sedimentary, igneous or hydrothermal deposits of copper are common. The world's major copper deposits are hosted by the granitic porphyry. Sedimentary copper is formed by a process similar to SEDEX. Copper is often associated with gold, uranium, lead-zinc, and nickel deposits. Iron Oxide hosted Copper Gold (IOCG) deposits (Olympic Dam type) have low concentrations but very high tonnage of these metals as well as uranium and REE.

- **Gold**

  Gold deposits are formed by a very wide variety of geological processes. Deposits are classified as primary deposits, alluvial (or placer) deposits, or residual (or laterite) deposits. Often a deposit will contain a mixture of all three types of ore. Orogenic gold or lode-type gold represents one of the primary modes of gold mineralization, which contains high-grade ore in thin quartz veins. Lode gold deposits are usually hosted in basalt or in sediments known as turbidite. During metamorphism, the gold is transported up faults by hydrothermal fluid and deposited when the fluid cools too much to retain gold in solution.

  Intrusive-related gold is generally hosted in granites, porphyry or rarely, dikes. This type of gold is usually associated with copper, tin and tungsten, and rarely, molybdenum, antimony, and uranium. Intrusive-related gold deposits rely on gold existing in the fluids associated with the magma, and the inevitable discharge of these hydrothermal fluids into the wall-rocks.

  Placer deposits, sourced from pre-existing gold occurrences, are formed by alluvial processes within rivers, streams and on beaches. The Witwatersrand gold deposit of South Africa is a paleo-placers deposit, partially enriched by later hydrothermal processes.

- **Uranium**

  The uranium is leached from radioactive granites during hydrothermal activity or during circulation

[11] *a sedimentary rock of hardened natural cement of calcium carbonate that binds other materials—such as gravel, sand, clay, and silt.*

of groundwater and brought into solution in acidic conditions and is deposited when this acidity is neutralized. Generally this occurs in certain carbon bearing sediments, within an unconformity in sedimentary strata. Uranium is also found associated with certain igneous rocks, such as granite and porphyry. The Olympic Dam deposit in Australia is an example of this type of uranium deposit. It contains 70% of Australia's share of 40% of the known global low-cost recoverable uranium inventory.

- **Iron ores**

  Hematitic iron ores are overwhelmingly derived from ancient sediments known as Banded Iron Formation (BIFs), which are composed of iron oxide minerals deposited on the sea floor. Particular environmental conditions are needed to transport enough iron in sea water to form these deposits, such as acidic and oxygen-poor atmospheres which prevailed within the Archaean and Proterozoic Era. Supergene processes related to weathering or hydrothermal activity have resulted in the concentration of hematitic iron ore from the BIFs.

  Magnetitic iron ores are genetically related to the mafic igneous activities. Indian major magnetite deposits (Kudremukh, Bababudan) are derived from ancient sediment.

- **Platinum**

  Platinum and palladium are generally found in ultra-mafic rocks, which have enough sulphur to form a sulphide mineral while the magma is still liquid. This sulphide mineral gains platinum by mixing with the bulk of the magma. Alternatively, platinum occurs in association with chromite either within the chromite mineral itself or within sulphides associated with it.

- **Nickel**

  Nickel deposits are generally found in two forms, either as sulphide or laterite. Sulphide type nickel deposits are formed in essentially the same manner as platinum deposits. Nickel is a chalcophile element which prefers sulphides, so an ultra-mafic or mafic rock which has a sulphide phase in the magma may form nickel sulphides. The best nickel deposits are formed where sulphide accumulates in the base of lava tubes or volcanic flows.

  Some sub-volcanic sills in the Thompson Belt of Canada host nickel sulphide deposits formed by deposition of sulphides near the feeder vent. Sulphide was accumulated near the vent due to the loss of magma velocity at the vent interface. The massive Voisey's Bay nickel deposit is considered to have formed via a similar process. Significant nickel sulphide accumulations are seen in the conduits and lava tubes of continental basalt and in the locales of thermal erosion in the underlying sediments in Noril'sk-Talnakh deposits, Siberia. The process of forming lateritic nickel deposits is essentially similar to the formation of lateritic gold deposits, except that ultramafic or mafic rocks are required.

- **Tin, tungsten, and molybdenum**

  These three metals generally form in a certain type of granite, via a similar mechanism to intrusive-related gold and copper. They are considered together because the process of forming these deposits is essentially the same. Skarn type mineralization related to these granites is a very important type of tin, tungsten, and molybdenum deposit. Skarn deposits form by reaction of mineralized fluids from the granite reacting with wall rocks such as limestone. Skarn mineralization is also important in lead, zinc, copper, gold, and occasionally uranium mineralization. Molybdenum is a common constituent of porphyry copper deposits and also occurs in association with hydrothermal sulphide.

- **Rare earth elements, niobium, tantalum, lithium**

  The overwhelming majority of rare earth elements, tantalum, and lithium are found within pegmatite. Ore genesis theories for these ores are wide and varied, but most involve metamorphism and igneous activity. Lithium is present as spodumene[12] or lepidolite[13] within pegmatite. Carbonatite[14] intrusions are important source of these elements.

---

[11] Spodumene is a pyroxene mineral consisting of lithium aluminium inosilicate, $LiAl(SiO_3)_2$

[12] Lepidolite is a member of the mica group of minerals with formula $K(Li, Al, Rb)_2(Al, Si)_4O_{10}(F, OH)_2$.

[13] Carbonatite: a type of intrusive or extrusive igneous rock defined by mineralogic composition consisting of greater than 50% carbonate minerals

Looking for Deep Located[14] Mineralization in India

With the exhaustion or fast decline of mineral deposits at shallow depths of the earth's surface, it has become imperative the world over to look at deeper levels of the earth's surface for mineral resources for meeting the ever growing need of mankind.

Given the intrinsic uncertainty and risk, exploration of deep-seated mineral deposits is essentially a sequential procedure, based on sound technical principles which are constantly refined with greater knowledge generated through successful exploration. The successive steps of the sequential exploration are based on a data-driven probabilistic approach. Generating better and better data through adoption of constantly improving technologies is key to increasing the probability of success.

Stages of search

The exploration of deep seated mineral resources, without having much apparent surface shows, is not a venture in isolation but requires a clear understanding and of the causative processes and factors which could lead to possible mineral localization. Therefore, the endeavour:

- draws heavily on the fundamentals of geosciences, specially the aspects of crustal evolution and metallogeny.
- demands rigorous work in the field and the laboratory with the application of latest techniques and technology
- depends on efficient data integration into multilayered GIS and preparation of stage-wise interpreted 3-D models (mineral belt model, deposit model, ore body model); and
- requires sizeable investment, over prolonged periods, with appreciable risk of non-return on the investment.

The search of deep seated deposits may be driven by:

- Concept-based mineral belt modelling (especially in virgin or greenfield areas)drawing on geological principles; or
- Data-based expectation (on the basis of shallower level deposits existing in a brownfield area) and geoscientific possibility of similar metallization at depth.

Guidelines for the search

Selection of potential target areas for exploration is based on specific geological parameters, which are useful in developing a prototype conceptual genetic model. For example, the theory of Plate Tectonics has dramatically improved our understanding of basic endogenic and exogenic processes or systems responsible for mineralization and possible locations of such systems in the Earth's crust. These processes can now be better modelled through application of experimental and theoretical geoscientific knowledge (e.g., geochemistry, fluid inclusion, geo-thermometry and geo-barometry, stable isotope systematics, hydrothermal alteration studies, robust geo-chronological determinations, radiogenic tracers, computer-based simulations, and remote sensing) to build working hypotheses, which can be put to ground test for locating concealed deposits. Additional or better quality data aligned to the hypothesis can validate (or modify or invalidate) the hypothesis, increasing the probability of mineralization as well as of locating it.

Characteristics of mineral deposits

The genesis of mineral deposits can be varied:

- Sedimentary processes of mineralization include direct precipitation of ore material from sea water and/or their subsequent concentration.
- Magmatic processes, plutonic or volcanic, involve fractional crystallization or melts of differing composition.

[14] *The Paper uses the terms "deep seated", "deep located", and "concealed" deposits in a nearly interchangeable way though there are slight differences.*

[15] *Exogenic processes are those driven by exogenic forces that primarily derive their energy from solar radiation. For instance, soil erosion is caused by the force of wind acting on bare ground. Endogenic processes are those that get their energy from endogenic forces originating deep within the Earth.*

- Hydrothermal processes caused by movement of hydrothermal solutions within the crust, often as a consequence of magmatic intrusion or tectonic upheavals. Sources of hydrothermal solutions include seawater and metamorphic fluids created during metamorphism.

A comprehensive understanding of the possible ore genetic criteria in a particular geological domain with the signature of crustal processes (sedimentary, magmatic, hydrothermal, metamorphic or their combination) is the primary task. Prognosis of the factors which could be responsible for ore concentration through the analysis of theoretical possibilities and assessment of indicators would be the next step in concept building.

Brownfield and Greenfield exploration

Geologically favourable areas for mineral potential depend on the particular mineral commodity or group of commodities under search. The region favourable for gold mineralization may not be coincident with those for lead-zinc or bauxite mineralization. There are two broad categories of terrains, viz., Brownfield and Greenfield.

Exploration is termed Greenfield if either no exploration has been conducted for the minerals of interest or previous exploration has not increased the probability of mineral occurrence; and Brownfield if some previous exploration has been conducted and there are known ore deposits. Greenfield exploration is highly conceptual, relying on the predictive power of ore genetic models to search for mineralization in unexplored ground. Greenfield exploration has a lower success rate, because the actual geology may be poorly understood at the start of the venture, or the concept on the basis of which the venture is being undertaken may not be applicable to the exact situation of the target area. Brownfield exploration is less risky, as the geology is better understood and exploration methodology is well known; however, the risk can still be significant.

A genetic model attempts to describe the physical and chemical processes that led to the formation of an ore deposit and its related empirical features. In Brownfield areas, exploration may rely on genetic ideas. The careful use of models based on a full empirical database and well constrained genetic theory, allows the geologist to place some degree of confidence on the chance that these targets will contain economic mineralization. In case of Greenfield search, the conceptual approach is to be built up on the basis of geological understanding of the depositional and tectono-magmatic set-up of the region, its age and relation to overall crustal evolutionary trend and metallogeny of that era. Synthesis and critical appraisal of the available regional geological geochemical, geophysical, remote-sensed data and assessment of indicative evidences of mineralization, if any, aided by literature scanning and pragmatic evaluation of global case histories of mineral discoveries in similar geologic environment would be equally important. Petrological characterization of the rocks (specially the magmatic units), picking-up of evidences of hydrothermal activities, detailing of metamorphic-metasomatic transformations, fluid inclusion and isotope studies, etc., may provide important clues in Greenfield investigations.

Area selection

In India, the greatest operational advantage is the availability of geological maps for the entire country on 1:250,000 and 1:50,000 scales. Regional ground gravity-magnetic (GM) data, high altitude aeromagnetic data and various interpretative compilations are available for large areas of peninsular India. Besides, airborne multisensor (magnetic+ electromagnetic (EM) + radiometric) geophysical survey data are available for most of the known mineral belts. Aided to these are the satellite imageries. All these datasets, when collected, collated, and synthesized, will provide the avenues for the first step towards the identification of geologically favourable domains, in both Brownfield and Greenfield.

After identifying favourable geological milieu for mineral search (with specific mineral commodities in view) in the Brownfield or Greenfield territories, which may run into thousands of square kilometres, the next task would be to select and prioritize target areas where more intensive exploration need to be planned. The exploration methods generally adopted at this stage are:

- Integrated study of remote sensed data, high altitude airborne survey data, and regional ground geophysical data in conjunction with regional geological maps

- Low-altitude multi-sensor airborne surveys with software support for data synthesis and interpretation aimed at anomaly location
- Regional grassroots geochemical surveys (stream sediments, rock, soil, gas)
- Ground geophysical surveys in selected areas
- Limited experimental test drilling; and
- Field and laboratory studies aimed at mineral prognosis.

At this stage, computer-based multivariate statistical analyses may establish characteristic inter-relationships of various parameters and lead to mineral belt modelling. The application of all the reconnaissance tools and data interpretation would need sound understanding of the overall geological and metallogenic environment. Ages of metamorphism, deformation, and intrusive events need to be established by robust geochronology in the area under study. There needs to be more emphasis on accurate dating of mineral deposits to define the critical age peaks of major mineral types. The geophysical and geochemical methods recommended for this stage of exploration and their basic principles are explained below.

Use of Airborne Geophysical Surveys

Where the surficial layers are of relatively recent origin and the favourable geological milieu occurs at some depth, the search for the "concealed" mineralization requires the application of geophysical techniques which can enable an understanding of the deeper layers. Fast-paced regional scanning by geophysical applications is needed at this stage for picking up responses of deep seated mineralization.

A choice must sometimes be made between helicopter and fixed-wing aircraft for an airborne electromagnetic or radiometric survey. Helicopters have an advantage in being able to maintain a more constant ground clearance above rugged terrain. Also, helicopters have a slow-flying capability, which allows for greater accuracy and they can land for a ground check in critical areas. Helicopter geophysical surveys can therefore be used in detailed work as well as in reconnaissance.

Among the airborne survey systems most popular are the aero-magnetic, aero-electromagnetic (AEM) and aero-Radiometric systems. Airborne Gravity surveys have also gained much utility as a fast reconnaissance tool. There is a vast choice of patented instruments with add-on data processors and interpretative software available with the multitude of survey agencies. A right choice of airborne systems would depend on the overall appreciation of the nature and disposition of the targeted geological entity, its surface and deeper environment, besides the physiography.

Use of Geochemical Survey data

One application of geochemistry in mineral search is to pick up the trace of ore building elements in the rocks and follow these to the locus of concentration at depth, called the litho-geochemical survey (bed-rock geochemistry). The other, far more widely used, is to pick up the products of partial disintegration (in soil, stream sediments, soil gas, etc.) of an ore body and trace these back to the source, called the pedo-geochemical and stream-sediment surveys. While looking for primary anomalies in bed rock is more appropriate after target / prospect selection, regional soil, soil gas or stream-sediment surveys aimed at locating secondary dispersion anomaly are essential at the reconnaissance stage. For the mineral exploration agencies, the development of reliable methods for the detection of ore deposits covered by overburden is critical to their risk reduction and future success. For the exploration methods to be reliable, an understanding of the dispersion processes is required.

The emergence of hydrogeochemistry and biogeochemistry as important exploration techniques in concealed and leached terrains needs serious attention. Application of hydrogeochemistry is well known and in vogue in the sequential stages of exploration.

Limited ground geophysical surveys and experimental test drilling in selected areas: ground truthing

Ground geophysical surveys may become necessary if the aero-geophysical data are either less specific or not matching with geological-geochemical data-sets. Very Low Frequency Electromagnetic (VLF) survey, which is a rapid and cheap method, may be useful at this stage. Controlled Source Audio magnetic-tellurics (CSAMT)

is also a low-cost geophysical technique that provides deep geologic information based on lateral and vertical resistivity contrasts. In any case, ground truthing of the aero-geophysical surveys needs to be done. This may include limited test drilling and sample analysis for discerning the stratigraphy or verifying mineralization. Drill core studies (petrology, mineralogy, analytical, etc.) at this stage may generate vital information, helping in the ultimate zooming into the target.

APPENDIX 4

Potential for Locating New Mineral Resources in India

Himalayas

Both from the point of view of plate tectonic status of this continent–continent collision zone and its comparison with the Alpine belt, the Himalaya deserves a thorough scanning for possible but varied metallogeny ranging from sedimentary-digenetic types in the frontal belt, SEDEX type and hydrothermal deposits in the Lesser Himalaya, Tertiary granitic pluton related metallization in the Central crystalline zone, bedded deposits in the Tethyan sediments, ophiolite related metallization along the Indus–Tsangpo suture zone and porphyry type deposits in the Trans-Himalayan region.

Bundelkhand granite-gneiss complex

It is now known, after discovery of the Pearl Lake deposit in Canada that porphyry copper deposits were formed during early Precambrian time. Precambrian porphyry deposits have been discovered in Australia, Finland, Canada, China, Sweden, and many other countries. The Malanjkhand Cu-deposit in MP, India is now recognized as one of the largest of this type, much later than its discovery. The vast Bundelkhand granitoid complex could therefore host porphyry sulphide or shear controlled hydrothermal mineralization. Concept oriented deeper probe should be a priority task in this region.

Deccan Trap covered region

About half a million square kilometres of west-central part of peninsular India is covered by the largely Mesozoic continental flood basalts known as Deccan Traps. The Deccan Trap covered terrain remains almost entirely unexplored. The oil companies have conducted extensive geophysical investigations to locate favourable structures in Mesozoic sediments underlying the trap (and also some drilling), but no effort was directed towards prognostication of metalliferous deposits. Other than the possibility of locating mineralized tracts in the Precambrian basement rocks, there are two broad possibilities of metallization within the Deccan volcanics, i.e., magmatic sulphide; and hydrothermal mineralization.

Other terrains that warrant a closer look

The following Brownfield areas among others may deserve a relook in search of deep-seated deposits:

- The Dharwar craton may be re-examined for locating greenstone related orogenic gold at deeper levels of the numerous schist belts, many of which have sub-economic gold occurrences at the surface. The Kolar Gold Field cannot possibly be the only place where economic gold values continue up to great depths. The Wynad-Nilambur Gold Field in Kerala also merits a concerted effort to locate deep seated gold mineralization.
- India is the only country in the world which in spite of having a vast Precambrian shield area does not have any nickel mining activity. No primary nickel sulphide deposit has so far been located. It may need a sustained campaign to look for both primary nickel and PGE in favourable domains.
- The Southern Granulite Terrain (SGT) should not be neglected for mineral search, as it is established now that a mineral deposit does not get dissipated by high grade metamorphism. Broken Hill Pb-Zn deposit in Australia; Renco gold deposit in felsic granulites of the Limpopo belt, Zimbabwe; gold in the high grade terrain of North China craton are some prominent examples. Though the Zn-Cu-Pb deposit in SGT at Mamandur, Tamil Nadu is small, it would certainly provide a clue to the suggested line of action. Gold mineralization in Attapadi valley, Kerala, also presents a case in favour of searching the granulite terrain.
- Serious research is needed to identify IOCG type metallogeny in India, which may provide vast opportunities for locating new deposits at depth. The copper-gold-uranium belts of northern Rajasthan, Singhbhum, and some areas in Chhattisgarh might merit a close scrutiny in this respect. Presence of mafic volcanics, high content of magnetite, profuse albitization (soda influx), hydrothermal hematitic breccia, etc., may be considered together as a starting point.

- As hematitic iron ore is no longer considered as the sole product of supergene process, it would be prudent to explore at depths beyond conventional limits to locate hydrothermally enriched ore horizons. Ample evidence have been gathered, from many Indian deposits, in favour of the existence of pre-deformation epithermal concentration of rich iron ore below the zone of supergene concentration.
- In the peninsular India, there are many crustal domains where concerted efforts should be directed for the location of Precambrian porphyry copper type deposits. The Malanjkhand Granite being equivalent in age to the much larger expanse of the Dongargarh Granite, the latter may form the immediate target for the search.

टेरी परिचर्चा पत्र

संसाधन उपयोगिता तथा शासन प्रणाली

विषय	लेखक	वर्ष
खनन क्षेत्र में लाभ प्रतिभागिता : जिला खनिज फाउंडेशनों की भूमिका का विश्लेषण	जोयिता घोष	2018
भारत के लिए पर्यावरणीय प्रशासनिक नियमों की पुनर्संरचना करना	एस. विजय कुमार और निधि श्रीवास्तव	2017
हमें राष्ट्रीय खनिज सुरक्षा के लिए एक नई राष्ट्रीय खनिज नीति की आवश्यकता क्यों हैं	एस. विजय कुमार और स्वाति गणेशन	2017
एक विश्वसनीय खनिज नीति के साथ आगे बढ़ना	एस. विजय कुमार और स्वाति गणेशन	2015
भारत में खनिज विकास और विनियामक ढांचा	एस. विजय कुमार और निधि श्रीवास्तव	2015
जैविक कृषि : भारत में स्थायी तथा समावेशी कृषि विकास बढ़ाने का विकल्प	शिल्पांजलि देशपाण्डे वर्मा	2015

टेरी द्वारा हाल ही में प्रकाशित अन्य परिचर्चा पत्र

विषय	लेखक	प्रभाग	वर्ष
भारतीय शहरों को ऊर्जा स्मार्ट बनाना	रहीमन, आर. एवं अन्य	टेरी–यूएनएसडब्ल्यू नीति सार	2019
ग्रामीण सड़कें और एसडीजी	एस. विजय कुमार	स्थायी पर्यावास	2019
भारत की जल संसाधन नीतियों को एसडीजी के साथ जोड़ना	डा. गिरिजा भारत एवं अन्य	जल संसाधन प्रभाग	2018
भारत में कोयला परिवर्तन काल	थामस स्पेंसर एवं अन्य	वैश्विक पर्यावरण अनुसंधान केंद्र	2018
भारत में संसाधन दक्षता वाले विद्युत वाहन क्षेत्र की ओर बढ़ना	सौविक भट्टाचार्य एवं अन्य	ईयू–आर.ई.आई. परियोजना	2018

टेरी के प्रकाशन एवं परिचर्चा पत्र कृपया http://www.teriin.org/publications से प्राप्त करें।

टेरी एक परिचय

दि इनर्जी एण्ड रिर्सोसिस इंस्टीट्यूट (टेरी) एक स्वतंत्र लाभ–निर्क्षेप संगठन है। इसे अनुसंधान, नीति, परामर्शी कार्यों एवं कार्यान्वयन में क्षमताएं प्राप्त हैं। टेरी ऊर्जा, पर्यावरण, जलवायु परिवर्तन, संसाधन और स्थायित्व के क्षेत्रों में बहु–आयामी विशेषज्ञता रखता है।

एक स्थायी भविष्य के वास्ते नवप्रर्वतनीय समाधान प्रस्तुत करने की परिकल्पना के साथ, टेरी का कार्यक्रम संरक्षण एवं पृथ्वी के संसाधनों का दक्षतापूर्ण उपयोग एवं अपशिष्टों को न्यूनतम रखने और संसाधनों के पुनः उपयोग के सतत अभिनव विकास के माध्यम से एक साफ–सुथरे और अधिक स्थायी भविष्य की ओर बढ़ना है।

टेरी के कार्यों में निम्नलिखित क्षेत्रों पर प्रमुखता दी गई हैं :

- सभी क्षेत्रों में संसाधनों का दक्षतापूर्ण उपयोग बढ़ाना
- स्थायी पद्धतियों की पहुंच बढ़ाना तथा उनमें तेजी लाना
- पर्यावरण एवं जलवायु पर प्रतिकूल प्रभाव कम करना।

टेरी राष्ट्रीय और राज्य सभी सरकारों के अलग–अलग श्रेणी के स्टेक–होल्डरों, अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों और सिविल संगठनों के साथ काम करता है और अनुसंधान पर आधारित सुधारात्मक समाधान प्रदान करने में सहायता प्रदान करता है। टेरी का मुख्यालय नई दिल्ली में है और इसके क्षेत्रीय केंद्र एवं कैम्पस बंगलुरू, गुरूग्राम, गुवाहाटी, मुम्बई, नैनीताल तथा पणजी में स्थित हैं।

वर्तमान में, टेरी के कार्य निम्नलिखित सात क्षेत्रों से मुख्यतः संबंधित हैं:

- कृषि
- जलवायु
- ऊर्जा
- पर्यावरण
- पर्यावास
- स्वास्थ्य और पोषण
- संसाधन

टेरी इन क्षेत्रों में प्रमुख तात्कालिक मुद्दों पर परिचर्चा पत्र प्रकाशित करता है जिनमें नीति निर्माताओं, विधायकों, अनुसंधानकर्त्ताओं तथा व्यवसायियों द्वारा उपयोग किए जाने के लिए बहु–विषयीय और बहु–क्षेत्रीय निहितार्थ विषय होते हैं। परिचर्चा पत्रों के प्रकाशन की टेरी के विशिष्ट अध्येताओं की एक उप–समिति द्वारा सिफारिश की जाती है। इस परिचर्चा पत्र का प्रकाशन खनिज संसाधनों से संबंधित टेरी के कार्यों के भाग के रूप में संसाधन उपयोगिता तथा प्रशासन प्रभाग द्वारा किया गया है।

संस्थान द्वारा प्रकाशित हाल में परिचर्चा पत्रों की सूची अगले पृष्ठ पर दी गई है।

अधिक जानकारी के लिए कृपया **http://www.teriin.org/** देखें।

ऊर्जा तथा संसाधन संस्थान (टेरी)
दरबारी सेठ ब्लॉक, आई.एच.सी. कॉम्प्लैक्स, लोधी रोड,
नई दिल्ली–110003

दूरभाष: 71102100 या 24682100
फैक्स : 24682144 या 24682145
वेब : http://www.teriin.org/
ई–मेल : pmc://@teri.res.in